वन अधिकार की उमंग

महिलाओं के संघर्ष और सफलताओं की कहानियाँ

मकाम
महिला किसान अधिकार मंच
वन अधिकार समूह
2022

वन अधिकार की उमंग

महिलाओं के संघर्ष और सफलताओं की कहानियां

मक़ाम

महिला किसान अधिकार मंच

वन अधिकार समूह

2022

विषय सूचि

हमारे सहयात्री द बस्टियन की ओर से प्रस्तावना	द बस्टियन
वन अधिकार की उमंग - श्रंखला की शुरुआत :	डॉ सोमा किशोर पार्थसारथी

संघर्ष और सफलताओं की कहानियां

1. *सानियाबस्ती खटीमा की महिलाये : न्याय का इन्तजार*	*उत्तराखंड*	*हीरा झंगपानी*
2. *आपका विकास, हमारा विनाश : पेन तालुका, रायगढ़*	*महाराष्ट्र*	*गौरी, मीनल, श्वेता*
3. *मनसी देवीके संघर्ष की जीत : आबूरोड, सिरोही,*	*राजस्थान*	*चंद्रकांता*
4. *वन उपज से अन्न सुरक्षा: महकोनी सामुदायिक वन अधिकार का संघर्ष*	*छत्तीसगढ़*	*दुर्गा/कौशल्या*
5. *साबरकांठा की एकल महिलाओं का वन अधिकार के लिए लंबा सफर*	*गुजरात*	*मेघा शेठ/दिनेश भोय*
6. *कोरची परिसर संघ ने किया वन क्षेत्र में खान का विरोध*	*महाराष्ट्र*	*कुमारीबाई जमाकांता*
7. *लम्बे संघर्ष के बाद वनराजी जनजाति को मिला जमीन पर अधूरा मालिकाना हक़*	*उत्तराखंड*	*खीमा जेठी*
8. *उम्मीदों की किरण बनी बालकी देवी गरासिया*	*राजस्थान*	*रणछोड़ देवासी*
9. *सालहे महिला समूह ने वन धन केंद्र से संकट में लिया फायदा*	*महाराष्ट्र*	*पद्मा उइके*
10. *बीज प्रकृति की विरासत, महिला करे इनकी हिफाजत*	*उत्तराखंड*	*हीरा झंगपानी*

निष्कर्ष: वन अधिकार *का* महिला के साथ जुड़ाव - सरोकार और रणनीतियाँ

प्रस्तावना

हमारे “द बस्टियन / THE BASTION सहयात्रियों की ओर से ....

हम अपनी पत्रकारिता को माध्यम बनाकर कहानियाँ लिखते हैं । उन कहानियों का क्या प्रभाव पड़ता है, यह जानने के लिए हम हमेशा उत्सुक रहते हैं । लोगों के संयुक्त प्रयासों से आने वाले बदलाव, और उनसे पड़ने वाले प्रभावों की कहानियां हमारे लिए सबसे प्रिय हैं। ऐसे ही कुछ प्रयासों से आने वाले बदलाव की कहानियों का एक संकलन अब आपके हाथ में है ।

2021 में *‘The Bastion / द बस्टियन’* और डॉ सोमा के पी के बीच एक चर्चा चली, और हमारे मन में यह विचार आया कि ज़मीनी स्तर पर काम करने वाले कार्यकर्ताओं, विशेष रूप से महिला नेताओं के साथ एक मीडिया ट्रेनिंग सत्र रखा जाए।

उदेश्य सरल था । हम चाहते थे कि इस कार्यशाला के ज़रिये जल, जंगल ज़मीन के हक़ों की लड़ाई, कहानियों के रूप में दर्ज हों, और उन कहानियों के लिए मीडिया के विभिन्न मंचों पर जगह बनाई जाए। हम समझना चाहते थे कि कार्यशाला में भाग लेने वाले साथियों को इस काम को अंजाम देने के लिए किस तरह की ज़रूरतें होंगी । किस प्रकार की सामूहिक गतिविधियों को करने से विभिन्न राज्यों - उत्तराखंड, छत्तीसगढ़, राजस्थान, गुजरात और महाराष्ट्र - से आये साथी आपस में घुल - मिल सकेंगे ?

हमारे लिए ये एक नयी पहल, एक नया अनुभव था , क्योंकि अलग -अलग संस्थानों से आये महिलाएं व पुरुष, इन कहानियों के खुद भी हिस्सा थे।नेत्री (NETRI) के साथ कई चर्चाओं के बाद , चार दिन की कार्यशाला का आयोजन किया जाना तय हुआ ।

सफल प्रयासों और संघर्षों की कहानियों का यह संकलन, कार्यशाला में आये साथियों के कठिन परिश्रम और आप सी विचार-विमर्श का परिणाम है। कोविड महामारी और लॉक डाउन के चलते कार्यशाला भौतिक / व्यक्तिगत रूप में नहीं हो पाई, लेकिन सभी साथियों की ऊर्जा और उत्साह ने इसे भी अड़चन नहीं बनने दिया । संघर्ष की कहनियों को एक दूसरे के समक्ष रखने की उत्सुकता; दलितों, आदिवासियों और पिछड़े वर्गों की आवाज़ को केंद्र में रखने की प्रतिबद्धता; और अपने अनुभवों को साझा करने की चाहने सभी को एक साथ लमें बांधे रखा। नेटवर्क की अनुपलब्धता बीच - बीच में आड़े ज़रूर आई।

प्रतिभागियों की अनूठी योग्यताएं - चाहे वो हीराजी की उत्सुकता और मुद्दे पर डटे रहने का आग्रह हो, दुर्गा जी के शांत और स्पष्ट विचार हों, या गौरी और श्वेताजी के शर्मीले मगर तीखे अवलोकन हों, सभी ने प्रस्तुत किताब की कहानियों को अनूठा बनाने में अपना योगदान दिया।

कार्यकर्ताओं ने अपने काम के दौरान , जंगल, जमीन और खेती से जुड़ी दस कहानियां, इस कार्यशाला में सब के साथ साझा कीं, जो इस किताब में संकलित हैं। यह जीवंत अनुभव, प्रत्यक्ष रूप से हमारा सामना भारत के तथा कथित विकास की वास्तविकताओं से कराते हैं।

महाराष्ट्र में एक राष्ट्रीय हाईवे के निर्माण से स्थानीय लोगों पर पड़ने वाले प्रभाव, उत्तराखंड के जंगलों से वहीं सदियों से बसे आदिवासी समुदाय की बेदखली, छत्तीसगढ़ में पेड़ों के काटे जाने के खिलाफ़ महिलाओं की लड़ाई, गुजरात में एकल और विधवा महिलाओं की वन संसाधनों के उपयोग और संरक्षण के अधिकारों की मांग, और ऐसी कई अन्य कहानियां इस संकलन में शामिल हैं।

महिलाओं को केंद्र में रखकर लिखी गईं ये कहानियां, न सिर्फ़ प्राकृतिक संसाधनों के आर्थिक पक्ष से जुड़े प्रश्नों की बात करती हैं, बल्कि सांस्कृतिक, धार्मिक, और सामाजिक संबंधों की ओर भी ध्यान खींचती हैं - खासकर ऐसे पक्ष जो महिलाओं के रोज़मर्रा के जीवन से जुड़े हैं।

यह कहानियां इन संसाधनों के सम्बन्ध में हो रहे विभिन्न टकरावों का ब्यौरा देती हैं - चाहे वो समुदायों के बीच आपसी टकराव हों, सरकारी और प्राइवेट कंपनियों के विरुद्ध लोगों द्वारा छेड़े गए संघर्ष हों, यावन -विभाग और अन्य जिलास्तरीय अधिकारियों के साथ गाँव वालों की होने वाली बहसें हों ।

वनाधिकार अधिनियम 2006, या भूमि अधिग्रहण अधिनियम (पुनर्स्थापना एवं पुनर्वास 2013) जैसे कानूनों के अतर्गत अपने अधिकारों या उचित मुआवज़े की मांगों को लेकर महिलाओं के धरना - प्रदर्शनों और ज्ञापनों आदि के ज़रिये डटे रहने के बारे में भी यह कहानियां हमें बताती हैं।

ये कहानियां प्राकृतिक संसाधनों से सम्बंधित टकरावों के आलावा उन से जुड़े विकास के बारे में भी हैं । ये कहानियां साहस और डटे रहने के जज़्बे की भी हैं, जो विकास की आम अवधारणा को पुनःपरिभाषित करती हैं।

आज हो रही मुख्यधारा की पत्रकारिता, और इन कहानियों के बीच ज़रूरी और महत्वपूर्ण भेद हैं । इनके लेखक ना सिर्फ़ इनमें कही गई वास्तविकताओं से गहरे रूप से जुड़े हुए हैं, बल्कि खुद उन परिस्थितियों में जीते हैं जिनका इन में वर्णन किया गया है।

यह कहानियां / खबरें किसी अख़बार या प्राइम टाइम न्यूज़ चैनल की हैडलाइन भले ही न बनें, लेकिन यह उन लोगों के बारे में हैं, जिनको भारत की विकास यात्रा के महत्वपूर्ण और अभिन्न अंग के रूप में देखा जाना चाहिए, लेकिन जो सामजिक-राजनैतिक उपेक्षा के शिकार हैं।

द बस्टियन *-The Bastion -*
शौर्या रेड्डी और वैष्णवी राठौर

https://thebastion.co.in

महिला किसान अधिकार मंच
MAHILA KISAN ADHIKAAR MANCH

वन अधिकार की उमंग - श्रंखला की शुरुआत

डॉ सोमा किशोर पार्थसारथी

MAKAAM “मकाम” महिला किसानों के लिए एक मंच है। महिलाओं के लिए वन अधिकार MAKAAM फोरम के कार्य के एक महत्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में उभरा है। महिला केंद्रित दृष्टिकोण से वन अधिकारों के एजेंडे के साथ जुड़ने के लिए हमारी क्षमताओं को बढ़ाने के लिए हमारे प्रयासों को निर्देशित किया गया है ताकि महिलाएं वन भूमि और वन संसाधनों पर अपने अधिकारों का दावा कर सकें; और महिलाओं को ज्ञान धारकों और प्रभावी प्रबंधकों और वनों के संरक्षक के रूप में वन संसाधनों के शासन में मान्यता और स्थान मिल सके।

केस स्टडीज का यह संकलन "पावरअप" वैश्विक कार्यक्रम के साथ साझेदारी में महिला वनवासियों के बीच महिलाओं के नेतृत्व का निर्माण करने के नेत्री कार्यक्रम में हमारे प्रयासों से उभरती है! हमारा उद्देश्य महिलाओं को वन वासियों के रूप में संसाधनों के अधिकारों का दावा करने, बहस और बहस में अपनी आवाज और एजेंसी का दावा करने और वन क्षेत्रों के भीतर रहने और उनके पारिस्थितिक रूप से समृद्ध और उनसे जुड़ी प्रथाओं को बनाए रखने में सक्षम होने के लिए प्राथमिकता के रूप में उनकी राय पर जोर देना है। वनवासियों के रूप में

2018 में नागपुर में MAKAAM के वन अधिकार समूहों के पहले सम्मेलन के बाद से, जहां मुद्दों की एक विस्तृत विविधता पर चर्चा की गई और वन अधिकारों और वन शासन पर सामूहिक नारीवादी कार्रवाई की क्षमता पर जागरूकता पैदा करने के प्रयास किए गए, हमने ग्राउंडिंग की दिशा में एक मार्ग को परिभाषित किया। वनवासियों और आश्रित समुदायों के भीतर महिलाओं के साथ हमारा काम उनकी चिंताओं को समझने

और उनके साथ हमारे जुड़ाव को गहरा करने पर केंद्रित है। हमने कानून के प्रावधानों को संकलित करने, समझने, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर सरकारी एजेंसियों के साथ संवाद के अवसरों की तलाश करने के लिए वनों के संदर्भ में महिलाओं के मुद्दों से परिचित कराने के लिए, वन अधिकारों के लिए उनकी मांगों को वन प्रशासन में उनकी भूमिका की मान्यता के लिए एक साथ यात्रा की है।

नेत्री या महिला नेताओं के साथ हमारा काम, जो हमारे प्रयासों से उभरी हैं, चार राज्यों छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, उत्तराखंड और राजस्थान में केंद्रित हैं, जहां महिलाओं ने जंगलों पर अपने पारंपरिक दावे करने के साथ-साथ निर्णय निर्माताओं के रूप में वन शासन के क्षेत्र में अपनी आवाज और उपस्थिति दर्ज की है।

इस पुस्तक में प्रदर्शित कहानियों/केस स्टडीज महिलाओं और पुरुषों के लिए कौशल और क्षमता बढ़ाने के लिए एक कार्यशाला का एक परिणाम है - जिनमें से कुछ स्वयं वनवासियों के समुदायों से हैं - अपने स्वयं के संघर्ष और सफलता की कहानियां लिखने के लिए जो उन्होंने देखी हैं। समुदायों के भीतर इन अधिकारों का दावा करने के लिए महिलाओं के साथ मिलकर काम करने वाली महिलाओं की आवाज को बुलंद करने के प्रयास करते हुए, या उनका हिस्सा थे। वन समुदायों के भीतर प्रशिक्षण और सीखने और निर्णय लेने की प्रक्रिया महिलाओं मजबूत करती है या वन शासन के उद्देश्य के लिए महिलाओं की भागीदारी को महत्वपूर्ण मानती है। उनके संघर्षों की कहानियों को प्रस्तुत करके हम वन परिदृश्य में महत्वपूर्ण कार्यकर्ता के रूप में और वन शासन के भीतर रिक्त स्थान का दावा करने वाले नागरिकों के रूप में उनकी आवाज को बढ़ाने की उम्मीद करते हैं। हमें उम्मीद है कि ये कहानियां हर जगह महिलाओं को अपने दावों और अपनी आवाज और रुचि के दावे के लिए संगठित होने के लिए प्रेरित करेंगी।

इसके साथ ही हम राज्य एजेंसियों के साथ उनकी पहुंच बढ़ाने और वन शासन और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में महिलाओं के प्रभावी समावेश को बढ़ाने के लिए भी उत्सुक हैं, महिलाओं के ज्ञान के आधार पर और अर्थव्यवस्था और पारिस्थितिकी के लिए महत्वपूर्ण और अविभाज्य के रूप में अंतर्निहित तथ्य पर। यह उनकी क्षमताओं में निवेश करके बेहतर पारिस्थितिक और सभी के बेहतर भविष्य का निर्माण किया जा सकता है। यह एक चुनौतीपूर्ण रास्ता है, लेकिन हम इसके लिए प्रतिबद्ध हैं।

हम वास्तव में उत्साहित हैं कि वनवासियों के रूप में महिलाओं की आवाज की कहानिया/ केस स्टडीज की यह पुस्तिका भारत की आजादी के 75 वें वर्ष में ऐसे समय में जारी की जा रही है जब एक आदिवासी महिला को सर्वोच्च पद पर चुना गया है, जो हमें भारत के भविष्य के लिए अधिक आशा देता है, वनवासियों और विशेष रूप से महिलाओं के लिए!

आभार

उन सभी लोगों के लिए आभार का एक शब्द जिन्होंने समर्पित रूप से काम किया है, इस संकलन को तैयार करने में समर्पित रूप से काम किया है:

- बैस्टियन के वैष्णवी और शौर्य जिन्होंने शुरुआत से जमीनी स्तर के लेखकों के लिए कार्यशाला में सीखने के लिए और हमें अपनी कहानियों को तैयार करने हेतु अपनी अपनी क्षमताओं में भरोसा रखते हुए "अपनी कहानी अपनी जुबानी" में लाने का
- केस स्टडी लेखकों की टीम, जिनमें से सभी पत्रकारिता रिपोर्टिंग के कार्य से अपरिचित थे, लेकिन सीखने और आत्मसात करने और अपनी कहानियों का निर्माण करने के लिए परिश्रम से काम किया, और
- बैस्टियन फैसिलिटेटर्स के अलावा, केस राइटर्स ने खुद एक-दूसरे के केस स्टडीज की समीक्षा करने और इन केस स्टडीज को अंतिम रूप देने में मदद करने का बीड़ा उठाया।

इन कहानियों की सामग्री की जिम्मेदारी लेखकों की है। इन कहानियों के लेखन की प्रक्रिया एक सामूहिक यात्रा रही है और हम आशा करते हैं कि यह को गहराई से जानने और उनको सहयात्रियों के रूप में जोड़े रखने के लिए प्रेरित करेगा।

दस्तावेज़ में किसी भी दोष को इस तथ्य के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है कि यह एक नौसिखिया प्रयास है और हम आशा करते हैं कि मीडिया महिलाओं की आवाज़ और उनकी चिंताओं को दूर-दूर तक और निर्णय लेने के क्षेत्र में ले जाने में हमारा समर्थन करेगा, जैसे कि महिलाएं वन अधिकारों और शासन पर नीति और प्रबंधन के क्षेत्र में एक मजबूत प्रतिनिधित्व का दावा कर सकती हैं।

डॉ सोमा किशोर पार्थसारथी, सह संयोजक मकाम वन अधिकार सामूहिक

MAKAAM is a forum and a platform for women farmers. Forest rights for women has emerged as a significant area of work of the MAKAAM forum. Our efforts have been directed towards enhancing our capacities to engage with the agenda of forest rights from a women centred perspective so that women can claim their rights to forest lands and to forest resources; and women gain recognition and space in the governance of forest resoruces as knowledge holders and effective managers and conservers of forests

This volume of case studies emerges from our efforts in the NETRI program to build women's leadership among women forest dwellers in partnership with the POWER UP! Global Program. Our aim is enable women to claim rights to resources, assert their voice and agency in discource and debates and assert their opinions about what they consider as priorities for them to be able to live within the forest regions and to sustain their ecologically rich ahd embedded practices as forest dwellers.

Since the first convention of the forest rights groups of MAKAAM in Nagpur in 2018 where a wide diversity of issues were discussed and efforts were made to build awareness on the potential for collective feminist action on forest rights and forest governance, we defined a pathway towards grounding our work with women within forest dweller and dependent communities to understand their concerns and deepen our engagement with them. We have travelled the path together to organize, understand the provisions of the law, seek opportunities for dialogues with government agencies at state and national levels to acquaint them with the women's issues in the context of forests, to acknowledge their demands for forest rights and for a recognition of their role in forest governance.

Our work with the NETRIs or women leaders who have emerged from our efforts has been concentrated in the four states of Chattisgarh, Maharashtra, Uttarakhand and Rajasthan with women for staking their traditional claims to the forests as well as asserting their voices and presence as decision makers in the realms of forest governance.

The CASE STUDIES showcased in this book are an outcome of a workshop to enhance skills and capacities to women and men grassroots workers - some of whom are from the communities of forest dwellers themselves - to write their own stories of the struggles and success they have witnessed at close quarters, or were part of as they attempt to bring the voices of the women who they work most closely with for the claiming of these rights within the communities. Training and learning and decisionmaking processes within forest communities tend to exclude women or assume women's participation as instrumental to the purpose of forest governance. By presenting the stories of their struggles we hope to amplify their voices as significant actors in the forest scenario and as citizens claiming spaces within forest governance. We hope that these stories will inspire women everywhere to organize for their claims and assertion of their voices and interests.

Simultaneously we are also eager to engage with state agencies to enhance their outreach and effective inclusion of women in forest governance and decisionmaking processes, based no the knowledge and embedded stakes of women as clental and inseperable to the frest economy and ecology. It is by investing in their capacities that the of ecological wellbeing and the future for all of us can be built. This continues to be a challenging path, as we continue to hear voices in positions of authority ask, “What are the womens issues, why do they need a specific focus?” and others resistant to womens emerging voices even within ally movements. We have a long way to forge ahead, but our alliances at every level and the support we have received along the way also energises us with hope for the journey ahead. We are indeed excited that this booklet of case studies of womens voices as forest dwellers is being released at the 75th year of indias independence at a time when an Adivasi woman has been elected as the leader, which gives us greater hope for the future of India's forest Dwellers and especially for women!

A word of acknowledgment to all those who have worked dedicatedly bring about this volume:

To Vaishnavi and Sourya of Bastion for walking this journey from scratch with us to organizing the workshop for grassroots case writers and giving us hope in our own capacities to produce our stories “Apni zabaani, apni kahaani”

The team of case study writers, all of whom were unfamiliar with the task of journalistic reporting but worked valiantly to learn and absorb and produce their own stories , and tolerated the repeated reminders and provocations to dig deeper to enhance the details of their stories . Apart from the the Bastion facilitators, the case writers themselves undertook peer review of each others case studies to help in the finalization of these case studies

The responsibility for the content of each case study lies with the authors. The process of produtino of this volument has been a collective journey and we hope that it will energise readers to delve deeper into the womens Question in forest rights and ecological governance and draw them in as co travellers in our mission.

Any flaws in the document may be attributed to the fact that this is a novice attempt and we hope that the media will support us in carrying the voices of the women and their concerns far and wide and into the echelons of decision making, such that women can claim a stronger representation in the domains of policy and discourse on forest rights and governance.

Soma Kishore Parthasarathy, Co convenor Makaam Forest Rights Collective

वन अधिकार की उमंग

महिलाओं के संघर्ष और सफलताओं की कहानियां

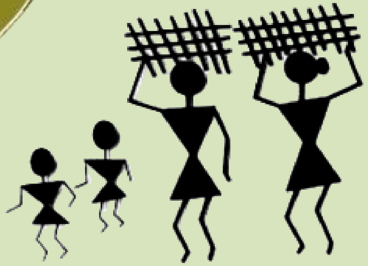

केस स्टडी #1 सानिया बस्ती खटीमा की महिलाये करती न्याय का इन्तजार

उत्तराखंड

हीरा झंगपानी

वर्ष 2014 में जब सानिया बस्ती के लोगों ने वन अधिकार कानून के तहत 101 व्यक्तिगत दावे फॉर्म, और सामुदायिक दावे फॉर्म भरे थे।तब से इन का संघर्ष चल रहा है।

पृष्ठभूमि

सानिया बस्ती, ग्राम पंचायत बिलहारी, ब्लाक खटीमा, जिला उधमसिंहनगर, उत्तराखंड। इस गांव में आदिम जन जाति के 15 परिवार एवं अन्य परम्परागत वन निवासी लोग रहते हैं। गांव नेपाल के बॉर्डर से लगा हुआ है। यहाँ रहने वाले मूलनिवासियों को स्थानीय भाषा में कुमाऊनी बोला जाता है। सानिया बस्ती मे **135** परिवार रहते हैं। इनकी आजीविका का साधन मजदूरी है। इसी से लगी हुई वनराजि बस्ती मे **15** परिवार रहते हैं। यह गाँव सानिया बस्ती से जुड़ा है। वनराजियों को स्थानीय भाषा में वनरावत कहा जाता है। वनरावत, उत्तराखण्ड के पिथौरागढ़ जिले के अस्कोट क्षेत्र की तहसील डीडीहाट और धारचूला के नौगांव में रहते हैं।

गरीबी और अशिक्षा के कारण कुछ परिवार यहाँ पलायन करके आए हैं। इनके पास जमीन बहुत कम है, और वन विभाग के लोग इन्हें हमेशा धमकाते हैं कि ये वन विभाग की जमीन है। खुद जंगलों में रहते हैं, लेकिन वन विभाग का बहुत आतंक है, वो आए दिन इनके साथ गाली-गलौच, मारपीट, छेड़-छाड़ करते हैं।

ये लोग डर-डर कर रहते हैं। दावा पत्र भरने के बाद भी ये हाल है। सरकार ने अभी तक इन के दावे मंज़ूर नही किये हैं, और पट्टे नहीं दिए हैं। ये मजदूरी भी नही कर सकते, क्यों कि इनके पास जॉबकार्ड नहीं हैं, श्रम विभाग में रजिस्ट्रेशन नहीं है, और जन धन योजना के खाते भी नहीं हैं।

2016 में महिला कल्याण संस्था द्वारा वन राजी बस्तीमें महिलाओ का संगठन बनाया गया, जिसमें - महिलाओं को जोड़ते हुए एक समूह संगठन बनाया गया। संगठन ने महिला अधिकारों के मुद्दों को लेकर काम किया, फिर सरकार के साथ सम्पर्क करके, व जागरूकता कार्यक्रम चलाकर गाँव में जॉब कार्ड बनाये गए और रहे श्रमविभाग में लोगों का रजिस्ट्रेशन कराया गया। वर्ष 2014 में सानिया बस्ती के लोगों ने, अन्य संगठनो के साथ मिलकर वन अधिकार कानून के तहत, 101 व्यक्तिगत दावे फॉर्म और सामुदायिक दावे भरे थे, तभीसे इनका संघर्ष चल रहा है।

आबादी/ परिवारों की संख्या - अनुसूचित जाति, अन्य परम्परागत वन निवासी, एवं आदिम जन जाति परिवारों की संख्या -150

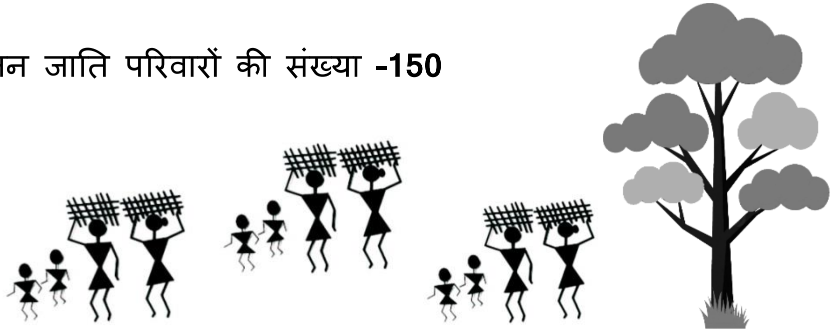

- व्यक्तिगत दावे प्रस्तुत - कुल **101**
- दावे महिलाओं के नाम 28
- दावे एकल एवं परित्यक्ता महिलाओं के नाम 5
- पुरुषो के नाम व्यक्तिगत दावे जमा किये गए 68
- सामूहिक दावा भी जमा किया गया 1

परिस्थिति

यहाँ की महिलाएं अपने खेत, अपनी जमीन को बचाने के लिए कई वर्षों से संघर्ष करती आ रही हैं। कई वर्षों से ये जंगलों को काटकर, उसे खेती के लायक बना कर, उस पर खेती करने लगे।[1] जब उन खेतों में अच्छी पैदावार होने लगी, तो अचानक 24 नवंबर 2018 को वन विभाग के अधिकारी व कुछ राजनेतिक-आर्थिक रूप से प्रभावशाली लोगों ने मिलकर सानिया बस्ती में आकर घेराबन्दी की, और खेत जोतने लगे। वन विभाग के द्वारा, लोगों के अतिक्रमण को हटाने के नाम पर फसलों को बर्बाद किया जाने लगा। जब लोगों ने विरोध किया, तो उन्हें धमकाया गया कि तत्काल यह जगह खाली करो। फिर महिलाओं के संगठन के माध्यम से उन्हें रोका गया, लेकिन वन विभाग के अधिकारीयों द्वारा महिलाओं के साथ गाली-गलौज व अभद्रता की गई। वन विभाग के द्वारा, वभू-माफ़ियाओं के साथ मिलकर समुदाय के लोगों का उत्पीड़न किया गया, जिसमें स्थानीय पुलिस प्रशासन भी मिला हुआ था। महिलाओं के साथ बदसलूकी की गई, कई बार बच्चियों के साथ छेड़-छाड़ भी हुई, जिस की वजह से गाँव में डर बना हुआ है। महिलाओं के द्वारा जब एफ़.आई.आर (FIR) दर्ज कराने की कोशिश की गई, तो पुलिस प्रशासन ने वो दर्ज नहीं की, उल्टे विरोध करने पर वन विभाग के कर्मचारियों ने महिलाओं के साथ गाली-गलौज और छेड़-छाड़ की। जब महिलाओं ने रिपोर्ट किया, तो पुलिस ने महिलाओं को धमकाकर वापस कर दिया। वन विभाग के अधिकारीयों ने अपने राजनैतिक-आर्थिक रूप से प्रभावशाली वक्तियों, और भू-माफ़ियाओं के साथ मिलकर महिलाओं के साथ ऐसी अभद्रताएं कीं, जिस से मानवता भी शर्मसार हो जाए।

---

[1]जैसा कि कल्पवृक्ष की मीनल तलपति और नीमा भट्ट ने केस स्टडी "वन भूमि अधिकार संघर्ष और महिलाओं का यौन उत्पीड़न - मामला" में दर्ज किया है।

जब महिलाओं ने इस का विरोध किया, तो उल्टा महिलाओं के ऊपर ही वन विभाग ने केस कर दिया। 15 महिलाओं के नाम पर विभिन्न धाराओं पर केस हुआ। एफ़. आई. आर (FIR) में महिलाओं पर सरकारी काम में रुकावट डालने, और वन विभाग के कर्मचारियों के साथ धका मुक्की करने का आरोप लगाया गया (सरकारी अधिकारियों को उन की ड्यूटी करने से रोकने, और ड्यूटी पर वन अधिकारियों पर शारीरिक हमला करने के लिए)। इस में एक महिला, जिसका 5 दिन पहले बच्चा हुआ था, उस का नाम भी रिपोर्ट में दर्ज है - सुरक्षित मातृत्व की बात तो बहुत दूर है। दो लड़कियों का नाम - जो बी0 ए0 मे पढ़ रही हैं, उनको भी धमकाया डराया गया, और केस में शामिल किया गया।

जब केस हुआ तब आशा दीदी से परिचित होनेके कारण महिला किसान अधिकार मंच (मकाम) से संपर्क किया गया, और उन से सलाह मशवरा किया गया। उनके सहयोग से अपना मुकदमा लड़ते हुए, और तमाम अधिकारियों का सामना करते हुए, कोर्ट कचहरी के दौरे लगाकर, 5 बहनों के ख़िलाफ़ दर्ज रिपोर्ट का नैनीताल हाईकोर्ट से स्टे लाया गया। जब केस हुआ तब आशा दीदी से परिचित होनेके कारण महिला किसान अधिकार मंच (मकाम) से संपर्क किया गया, और उनसे सलाहमशवरा किया गया। उन के सहयोग से अपना मुकदमा लड़ तेहुए, और तमाम अधिकारियों का सामना करते हुए, कोर्ट कचहरी के दौरे लगाकर, 15 बहनों के ख़िलाफ़ दर्ज रिपोर्ट का नैनीताल हाई कोर्ट से स्टे लाया गया।

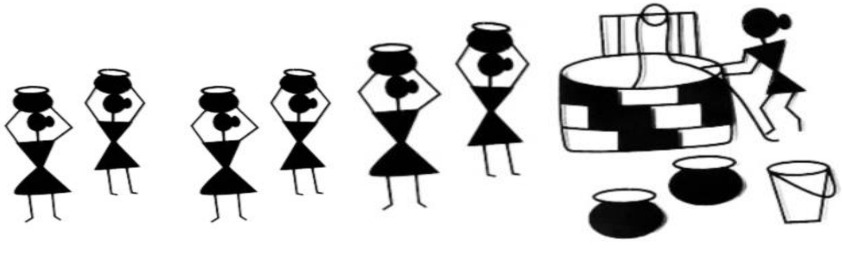

उसके बाद सानिया बस्ती की महिलाओं ने मकाम (महिला किसान अधिकार मंच) के सहयोग से राज्य महिला आयोग; राष्ट्रीय महिला आयोग; अनुसूचित जाति आयोग; अनुसूचित जनजाति आयोग; मोटा (जन जातीय कार्य मंत्रालय) आदि तमाम जगह गुहार लगाई - लिखित रूप से पत्र भी दिए। महिलाएं जब बसों में जातीं थीं, तो उन का डर था कि कहीं पुलिस उन्हें पकड़ न ले - फिर भी हिम्मत दिखाई।

महिलाओं के परिवार दिनरात संकट में जी रहे हैं। वो कहती हैं कि, "हम तो अपना पेट काटकर, अपनी बच्ची को पढ़ा लिखा रहे थे, की ये पढ़ लिख कर नौकरी करेगी। लेकिन अब इस के ख़िलाफ़ वन विभाग ने झूठा मुकदमा कर दिया। जब कि सरकार एक तरफ से कहती है 'बेटी पढ़ाओ बेटी बचाओ', फिर ऐसी बेइंसाफ़ी क्यों?" लेकिन इतनी चिंताओं के बावजूद भी, इन महिलाओं का लड़ने का हौसला कम नहीं हुआ है।

ग्रामीण अगर एक दिन भी काम पर ना जाएँ, तो शाम को उनका चूल्हा नहीं जलता, फिर भी ये ग्रामीण हर तीसरे दिन, स्थानीय कोर्ट कचहरी से लेकर, देहरादून और दिल्ली दरबार में अपनी लड़ाई को लेकर न्याय की गुहार लगा रहे हैं। और इस लड़ाई में इनकी कानूनी मदद मकाम (महिला किसान अधिकार मंच) व अन्य संगठनों के साथियों ने की है, और साथ मिलकर आंदोलन तक किया है।

महिलाओं ने हार नहीं मानी, मुकदमे को लेकर महिलाओं ने कानूनी रूप से पहल की और हाई कोर्ट से स्टे लिया। स्टे के दौरान महिलाओं ने न्याय के लिए, राज्य से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक पैरवी की, आपस मे एकता बनाई, खुद महिलाओं ने अपने केस की पहल की।

ग्राम सानिया बस्ती में महिला संगठन के प्रयास से 15 **महिलाओ के नाम पर रिपोर्ट दर्ज होने के बाद महिलाओं ने आंदोलन किया। उपजिला अधिकारी खटीमा के दफ़्तर में भी प्रदर्शन किया गया।**

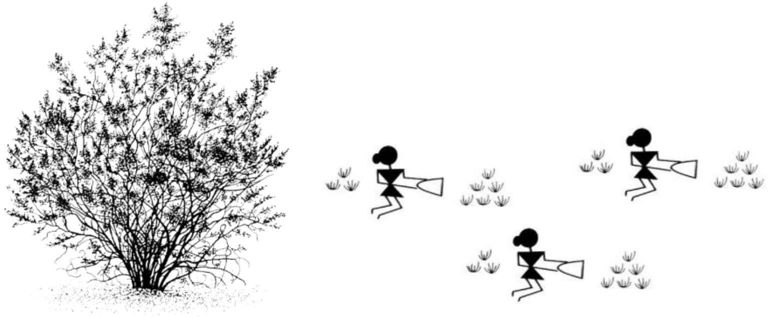

वनराजी आदिम जनजाति समूह की अध्यक्षा, तुलसी ने बताया कि, "हम लोगों को महिलाओं के साथ हिंसा होने पर कहाँ पर रिपोर्ट कर सकते हैं, यह बताया गया, हमें महिला हिंसा विरोधी कानून, और वन अधिकार कानून पर, कार्यशाला में ट्रेनिंग भी मिली है। अगर हमारे साथ हिंसा होगी तो हम सभी महिलाएं अपनी आवाज़ खुद उठा सकते हैं

आगे क्या होना चाहिय

महिला संगठन की अध्यक्ष पार्वती देवी ने कहा, "हम लोगों को महिला अधिकार मंच की तरफ़ से पोस्टर पर्चे दिए गए और वनअधिकार कानून के बारे में ट्रेनिंग दी गई। जानकारी प्राप्त करने के लिए, सूचना के अधिकार कानून के इस्तेमाल के बारे में भी बताया गया।"

"गाँव मे बैठक करके गाँव वालों द्वारा तय हुआ की जब वन विभाग वाले महिलाओं एवं बच्चियों के साथ हिंसा करेंगे, तो तुरन्त हम लोग रिपोर्ट करेंगे, और रिपोर्ट नही होने पर, कानून की सहायता लेंगे।"

आशाजी ने बताया कि, "जबसे हमने व्यापक स्तर पर आंदोलन किया, तब से वनविभाग ने महिलाओं के साथ हिंसा और अभद्र व्यवहार नहीं किया है। "101 दावों को लेकर सूचना के अधिकार के तहत जानकारी मांगी गई, जिस में जबाब आया की यह दावे विचाराधीन हैं। ये वही दावे हैं, जिन को शासन ने कुछ समय पूर्व ही लापता बताया था। "हम लोगो की जंगल से आजीविका चलती है, हम जंगल में वर्षों से रहते आ रहे

हैं। तेजपत्ता, कड़ीपत्ता, लिन्गोड़े, कोचू, करेला, मछली, तमाम सब्जियां आदि हमें जंगल से मिलती हैं जिन का हम लोग खुद इस्तेमाल करते हैं, और बाज़ार में भी बेचते हैं।”

आशादीदी आगे कहती हैं, “जंगल में हमारी संस्कृति जुड़ी है। हम वर्षों से जंगलों में निवास कर रहे हैं। जंगल की देख-रेख हम करते हैं। जंगलों में क्या-क्या उगता है हम पहचानते हैं। जंगलों से सूखी लकड़ी बेच कर अपने परिवार का पालन पोषण करते हैं।जंगलों में जड़ी बूटी, साग सब्जियों की पहचान हम करते हैं। जंगलों का प्रबंधन, संरक्षण, एवं जंगल बचाने की जिम्मेदारियां हमारी हैं, क्यों कि हम लोग यहाँ बरसों से निवास करते आए हैं।”

जमीन बचाने की लड़ाई बहुत लंबी लड़ाई है, क्यों कि जमीन ही ऐसा एक संसाधन है, जिस पर बड़े-बड़े पूँजीपतियों की नज़र है। आदिवासी और वनवासी ही इन ज़मीनों के असली मालिक हैं, इस लिए सभी की गिद्धदृष्टि इन पर है - इसलिए जमीन बचाने की लड़ाई और कठिन होती जा रही है।

ऐसे में सानिया बस्ती की महिलाओं ने ये तय कर लिया है की वो जान देदेंगी, लेकिन अपनी जमीन को पूँजीपतियों के हाथमें नही जाने देंगी। महिलाओं ने ठान लिया है कि अपने जंगल को सुरक्षित कर के ही चैन की साँस लेंगी।

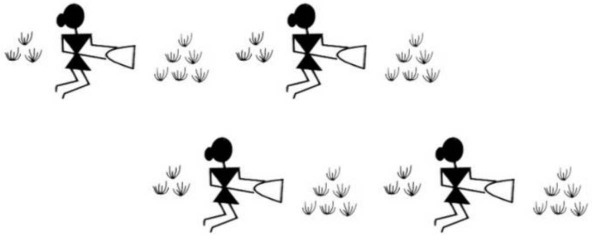

केस स्टडी #2

आपका विकास, हमारा विनाश

पेन तालुका, रायगढ़, महाराष्ट्र

गौरी, मीनल, श्वेता

शितोले गाँव के नज़दीक मुंबई-गोवा राष्ट्रीय महामार्ग क्र.17 जाता है| यहाँ रहने वाले आदिवासी पुरुष और महिला किसान, हाईवे के किनारे की जमीन पर सब्ज़ियाँ उगाते थे| शितोला में अधिकांश लोगों की भूमि, इस राजमार्ग को चौड़ा करने के लिये जबरदस्ती अधिग्रहित की गई| इस अन्याय के खिलाफ कातकरी आदिवासी महिलाओं ने आवाज उठाई है!

महाराष्ट्र के रायगड में कातकरी आदिवासि

यह कहानी है रायगड जिले के पेण तालुका के शितोले गाव में रहने वाली कातकरी जनजाति की कातकरी वस्तुतः सहयाद्री की संतान हैं। कातकरी को कटोडी, कटवाड़ी, याकथोड़ी भी कहा जाता है। कातकरी जनजाति को महाराष्ट्र में आदिवासियों में सबसे पिछड़ी जनजाति माना जाता है। महाराष्ट्र के रायगड जिले मे 12 प्रतिशत आदिवासी हैं। प्राचीनकाल में कातकरियों का मुख्य पेशा कात निकालना था, खैर या बबूल के पेड़ से कठ या कत्था बनाना और बेचना, इसी लिए उन का नाम कातकरी पड़ा। वे शिकार करने, कोयला बनाने, जंगल से लकड़ी इकट्ठा करने और शहद बेचने का भी काम करते हैं। इन का मुख्य व्यवसाय कृषि और सब्जियां उगाना है।

शितोले, पेणजि. रायगड

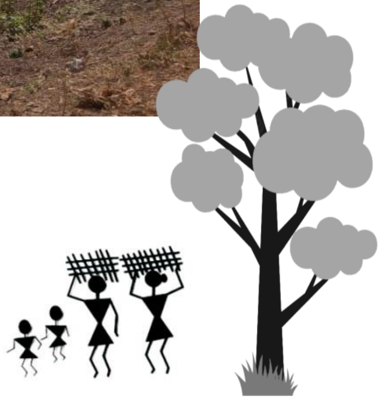

सब्जियां उगाने में महिलाओं का सहभाग

शितोला गाँव में कातकरी कई पीढ़ियों से रह रहे हैं। इस वाडी के कुछ घर मिट्टी के बने हैं, और कुछ झोपड़ियाँ हैं। वन भूमि पर खेती करने वाले कुल 70 आदिवासी परिवार यहाँ रहते हैं। यह कातकरी जनजाति, वन भूमि पर रागी, सामा और सब्जियों की खेती करते हैं (जैसे करेला, मूली, पालक, चुकंदर, ककड़ी, भिंडी, शकरकंद आदि)। सब्जियां उगाने में यहाँ की महिलाओं का योगदान सबसे ज्यादा है। सब्जियों के लिए भूमिकी तैयारी, जमीन की मशागत आदि में महिलाओं का सक्रीय सहभाग होता है।

सब्जियों के लिए पानी देना, और सब्जियां पूरी तरह से तैयार होने के बाद, उन्हें बाजार में बेचना - यह काम, ये महिलाएं पूरी सक्षमता से करती हैं। अक्टूबर-नवंबर के बाद, अधिकांश कातकरी परिवार कोयला भट्ठे, वीट भट्ठे के काम में चले जाते हैं।

शितोले गाँव के नज़दीक मुंबई-गोवा राष्ट्रीय महामार्ग क्र.17 जाता है। यहाँ रहने वाले आदिवासी पुरुष और महिला किसान, हाईवे के किनारे की जमीन पर सब्जियां उगाते थे।

वन अधिकार अधिनियम (2006), भारत में एक ऐतिहासिक वन कानून था, जिसके तहत वन संसाधनों पर व्यक्तिगत एवं सामुदायिक अधिकारों को मान्यता दी गई। इस गाँव में रहने वाले कातकरी जनजातियों ने वन-जमीन का दावा इस कानून के अनुसार दाखिल किया। पेण, रायगड के इलाके में, विशेषत: कातकरी समुदाय मे कार्यकरने वाली अंकुर ट्रस्ट ने, जिलाधिकारी साहब से आवेदन कर उन सभी के दावे की प्रक्रिया चलाई, और अंकुर संस्था के लगातार अनुसरण से, उस जमीन के दस्तावेज में आदिवासी महिलाओं और पुरुषों का नाम संयुक्त रूप से लिखा गया!

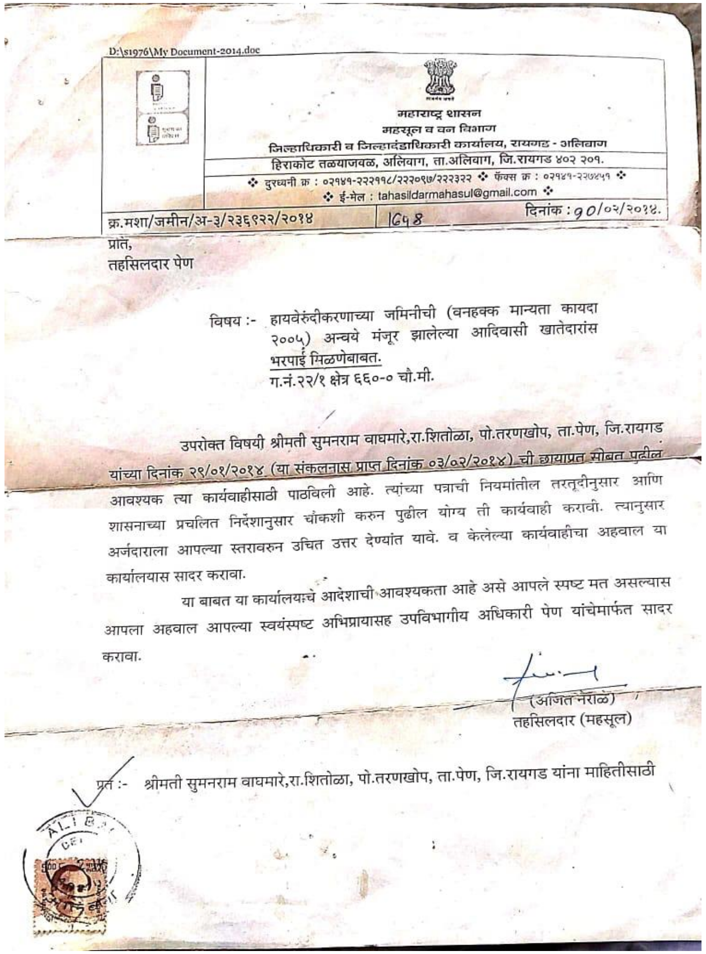

D:\s1976\My Document-2014.doc

महाराष्ट्र शासन
महसूल व वन विभाग
जिल्हाधिकारी व जिल्हादंडाधिकारी कार्यालय, रायगड - अलिबाग
हिराकोट तळयाजवळ, अलिबाग, ता.अलिबाग, जि.रायगड ४०२ २०१.
❖ दुरध्वनी क्र : ०२१४१-२२२११८/२२२०९७/२२२३२२ ❖ फॅक्स क्र : ०२१४१-२२७४५१ ❖
❖ ई-मेल : tahasildarmahasul@gmail.com ❖

क्र.मशा/जमीन/अ-३/२३६९२२/२०१४ 1658 दिनांक : 10/०२/२०१४.

प्रति,
तहसिलदार पेण

विषय :- हायवेरुंदीकरणाच्या जमिनीची (वनहक्क मान्यता कायदा २००५) अन्वये मंजूर झालेल्या आदिवासी खातेदारांस भरपाई मिळणेबाबत.
ग.नं.२२/१ क्षेत्र ६६०-० चौ.मी.

उपरोक्त विषयी श्रीमती सुमनराम वाघमारे,रा.शितोळा, पो.तरणखोप, ता.पेण, जि.रायगड यांच्या दिनांक २९/०१/२०१४ (या संकलनास प्राप्त दिनांक ०३/०२/२०१४) ची छायाप्रत सोबत पुढील आवश्यक त्या कार्यवाहीसाठी पाठविली आहे. त्यांच्या पत्राची नियमांतील तरतूदीनुसार आणि शासनाच्या प्रचलित निर्देशानुसार चौकशी करुन पुढील योग्य ती कार्यवाही करावी. त्यानुसार अर्जदाराला आपल्या स्तरावरुन उचित उत्तर देण्यांत यावे. व केलेल्या कार्यवाहीचा अहवाल या कार्यालयास सादर करावा.

या बाबत या कार्यालयाचे आदेशाची आवश्यकता आहे असे आपले स्पष्ट मत असल्यास आपला अहवाल आपल्या स्वयंस्पष्ट अभिप्रायासह उपविभागीय अधिकारी पेण यांचेमार्फत सादर करावा.

(अजित नराळे)
तहसिलदार (महसूल)

प्रत :- श्रीमती सुमनराम वाघमारे,रा.शितोळा, पो.तरणखोप, ता.पेण, जि.रायगड यांना माहितीसाठी

कातकरी आदिवासीयों का सरकार से किया हुआ पत्र व्यवहार

हाई वे भू संपादन के लिए ली गई वन-जमीन

शितोला में अधिकांश लोगों की भूमि इस राजमार्ग को चौड़ा करने के लिये जबरदस्ती अधिग्रहित की गई थी।राजमार्ग चौड़ी करण के संबंध में, 2014 में 12 भूमि धारकों को नोटिस भेजा गया था।

इसके अनुसार यहां के कातकरी आदिवासियों की वन-भूमि सरकार ने कानून केतहत अधिग्रहित करने की प्रक्रिया पूरी कर दी है!

राष्ट्रीय राजमार्ग अधिनियम 1956 के खंड 3 जी के अनुसार, दावेदारों ने राष्ट्रीयमहामार्ग के लिये उपयोग की गई जमीनों का सरकार कितना मुआवजा दे, इस बारे में लिखित आवेदन किया| लेकिन इन में सिर्फ 04 कातकरी आदिवासियों को मुआवजा मिला। 08 कातकरी आदिवासियों

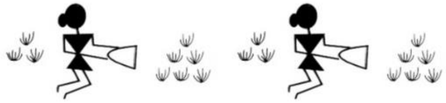

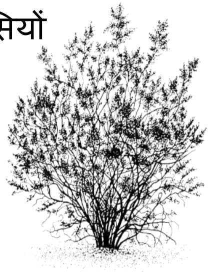

को बताया गया की संबंधित 7/12 सर्वेक्षण संख्या दूसरे स्थान पर है, इस कारण उन्हें कोई मुआवजा नहीं दिया गया। इस में अधिकतर संख्या में महिलाएंहैं, जिन में एकल महिलाएं भी थीं।

सरकार की इस गलती के कारण, आदिवासियों की वन-भूमि, जो आजीविका का आधार थी, सरकार ने बिना कोई मुआवजा दिए अधिग्रहित कर ली और उस पर महामार्ग का काम शुरू कर दिया। इस में एकल महिलाए भी प्रभावित हुईं, और २२ परिवारों को अपनी ही जमीन से बेदख़ल होना पड़ा। उनका रोजगार भी चला गया, और उन्हें नुकसान भी सहना पड़ा| नतीजतन, इन आदिवासियों के लिए आय का कोई स्रोत नहीं रहा, और उनके निर्वाह का सवाल खड़ा हो गया।

अपनी पुरानी वन-जमीन को याद करते हुए, आज के राष्ट्रीय महामार्ग पे खड़ा हुआ
एक आदिवासी किसान

ज़मीन गयी
और मुआवज़ा भी नहीं मिला

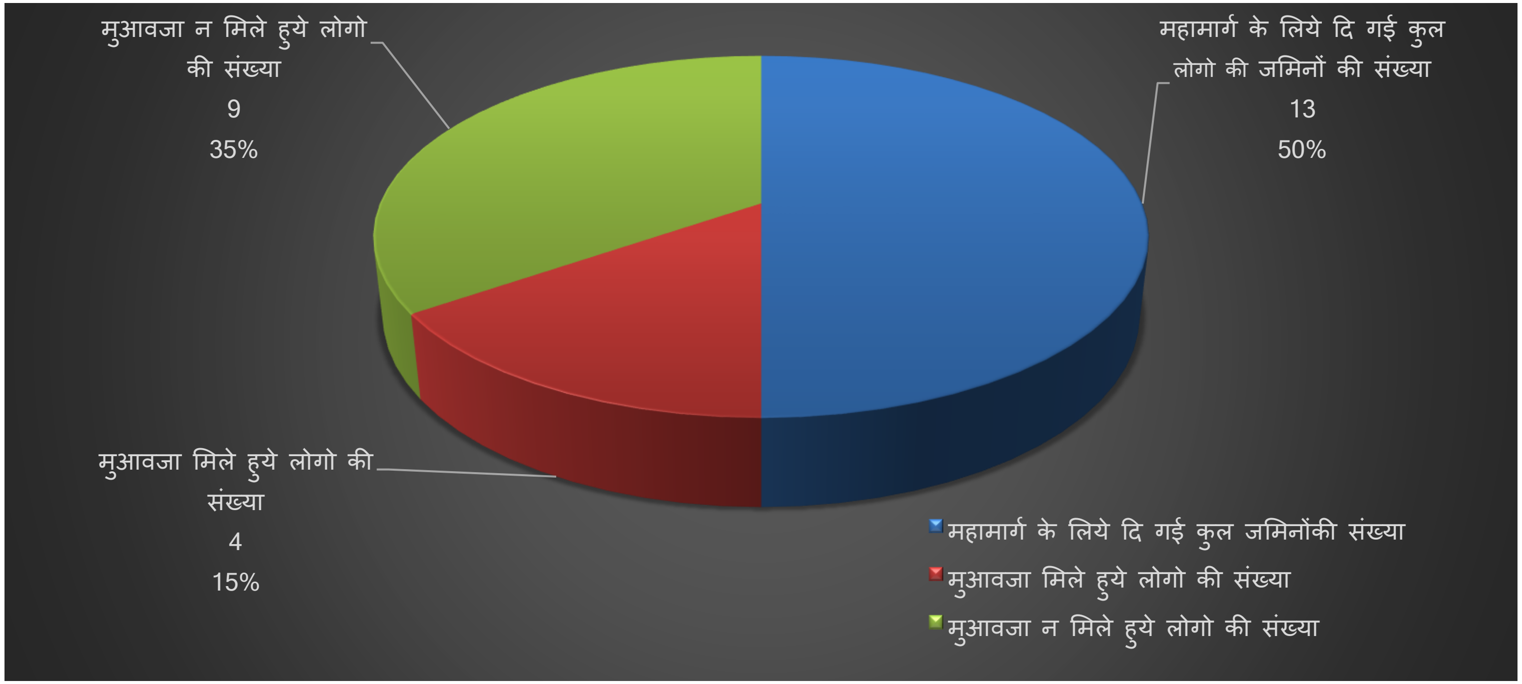

<u>राष्ट्रीय राजमार्ग क्रमांक 17 चौड़ीकरण परियोजना के पीड़ितों द्वारा निम्न मांगें रखी गईं।</u>

1. **प्रभावित आदिवासी क्षेत्रों की माप में काफ़ी गड़बड़ी हुई है। भ्रम को दूर करने के लिएआदिवासियों की आपत्तियों पर विचार किया जाना चाहिए।**
2. संबंधित आदिवासियों की मांगों और बयानों के अनुपालन में 3 जी के नोटिस पर ध्यान नहीं दिया गया।
3. **हाईवे से 15 मिनट की दूरी के अंदर, मकानों और जमीनों को बाजार भाव के हिसाब से मुआवजा दिया जाए। राष्ट्रीय राजमार्ग अधिनियम में संशोधन कर, परियोजना प्रभावित लोगों के पुनर्वसन की व्यवस्था की जाए|**
4. सभी परियोजना प्रभावित आदिवासियों को, परियोजना प्रभावित प्रमाण पत्र दिया जाना चाहिए।

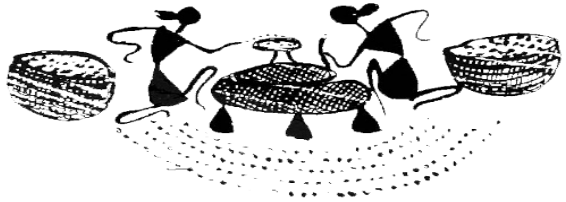

राजमार्ग परियोजना के संदर्भ में ऐसा प्रतीत होता है कि वन अधिकार मान्यता अधिनियम ने आदिवासियों को विशेष अधिकार दिए हैं, जिन का वन विभाग द्वारा उल्लंघन किया जा रहा है। सरकार की लापरवाही के कारण सभी कातकरी आदिवासियों के पास उनकी **7/12** वन भूमि है, लेकिन उन में से कुछ **7/12** की सर्वेक्षण संख्या दूसरी(सर्वेक्षण संख्या **22** के बजाय सर्वेक्षण संख्या **18**) दिखाई जा रही है, और उनको कोई मुआवजा नहीं मिला।

राज मार्ग के चौड़ीकरण के कारण, कातकरी आदिवासी वन-भूमि राजमार्ग परियोजना में चली गई, जो इन लोगों के लिए रोजगार का एक प्रमुख स्रोत था, और उन्हें कृषि छोड़ कर मजदूरी के लिए अन्य स्थानों पर जाना पड़ा। ऐसा लगता है कि विकास प्रक्रिया होने के बजाय, केवल विस्थापन हुआ है।

हाईवे चौड़ा होने के कारण, जिस जमीन पर महिलाएं सब्जियां उगाती थीं, वह चली गई।इस लिए उन्हें ऊंची कीमत पर जमीन किराए पर लेनी पड़ रही है, और वहां सब्जियां उगानी पड़ रही हैं। महिलाएं, जमीन और सब्जियों पर ज्यादा खर्च करती हैं, और उन्हें कम मुआवजा मिलता है।

राजमार्ग परियोजना से उत्पन्न कातकरी जनजातियों की समस्याओं का समाधान निकालने के लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति का अभाव है। उसी तरह अपने साथ हो रहे अन्याय के खिलाफ आवाज उठाने के लिए कातकरी आदिवासियों में असंघटन है।

वर्तमान में, कातकरी आदिवासी जिस वन-भूमि पर खेती कर रहे थे, वो इस राजमार्ग परियोजना में चली गयी है, और उन्हें अन्य जगहों से जमीन किराए पर लेनी पड़ रही है, और उन पर सब्जियां उगानी पड़ रही हैं।

ऐसी विकास परियोजनाओं के कारण, पीढ़ियों से वहाँ रहने वाली कातकरी जनजातियां, निर्वाह के नए साधन खोजने के लिए अपनी जड़ों से दूर जा रही है। अभी पेट भरने के लिए ना तो जंगल है, ना जोतने के लिए जमीन! इसी कारण कातकरी महिला नेता, पार्वती वाघमारे कहती हैं, "हाई वे चौड़ीकरण - जिसे आप विकास कहते हैं, वो तो हमारा विनाश ही है!"

केस स्टडी #3 मन्सी देवी के संघर्ष की जीत

आबू रोड, राजस्थान

चंद्रकांता

“अभी 20-25 सालों से तो बहुत कुछ बदल गया है। अब हम जंगल में जाते हैं तो वन-विभाग वाले (जंगलाती) रोक-टोक करने लगते हैं। उन्होंने जैसे जंगल पर अब अपना अधिकार जमा लिया है।”

मन्सी गरासिया/ सोनाराम गरासिया गाँव महिखेड़ा, ग्रामपंचायत बहादुरपुरा की रहनेवाली हैं। मन्सी के दो बेटे और तीन बेटियां हैं। मन्सी कभी स्कूल नहीं जा सकीं। वो जंगल से लकड़ी, आंवले, जामुन, इमली,खजूर,तेंदूपत्ते लाती हैं, और उन्हें बेचकर अपनी आजीविका चलाती हैं। उनकी तीन बकरियां, और दो बकरे हैं। बकरों के बड़े होने पर, वो उन को बेच देंगी। मन्सी के पास एक बीघा खेत है, जिसमें वो मक्का, सोप, गेहूं, अरंडी की खेती करती हैं, और जब खेती नहीं होती, तो नरेगा में मजदूरी पर जाती हैं।

खेतीसे हुई फसल का एक हिस्सा वो अपने परिवार के लिए रखती हैं, और बाकी फसल स्थानीय बाजार में बेचकर, अपनी आजीविका निर्वाह करती हैं। इसके साथ ही खेत में चीले, चीबड़े, (ककड़ी) चील, बथुआ, मूली, रायडा जैसी मिश्रित फसलें अन्य फसलों के साथ करती हैं।

जब उन्होंने अपनी जिंदगी के दिनों को याद किया, तो पाया कि उनका जन्म इसी आदिवासी गांव में हुआ, और विवाह भी इसी गांव में हुआ। उन के मायके का परिवार भी, परदादा के पहले से, इसी जंगल में रहते आया है। उनके ससुराल के परिवार में भी, ससुरके पिता, उनके पिता, और उनके भी पिता से भी

पहले, इसी आदिवासी जंगल में निवास करते थे। मन्सी ने बताया कि, वो तो अपनी मां के साथ जंगल में जाती थीं, और जंगल में बकरी चराने में बहुत अच्छा लगता था - क्योंकि जंगल में खूब पेड़, खूब छाया होती; फल, फूल, जानवर होते और जंगल में पूरा दिन रहते, और शाम को घर आते। जंगलमें जाने पर कोई रोक-टोक नहीं होती, और इन्हीं जंगलों से वन उपज - जिनमें तेंदूपत्ता, लकड़ी, शहद, जामुन, खजूर, महुआ, केरी, आंवले, इमली, टिमरू, केसुला, सफेद मूसली, पेड़ों की छाल आदि लाते, जो दैनिक जीवन के लिए काम में आतीं। पशुओं को जंगल में चराने जाते और चारा - घास भी लेकर आते थे। आस पास के जंगल में उनके समुदाय के छोटे बच्चे स्कूल के बाद जंगल जाते, और वहां से वन उपज लाते।

मन्सी आगे बताती हैं, "हम घंटों जंगल में बिताते, वहीं छाया में बैठ जाते, ठंडी-ठंडी हवा का आनंद लेते, अपने साथ रोटी लेकर जाते - उसे भी जंगल में खाते, और तालाब में पानी पीते।जंगल में पत्तों, पतंगों की आवाज़ें आतीं, जिस में बहुत आनंद आता। वही जंगल में हमारे बावसी का मंदिर भी है, जिस में हम जाते हैं। जब हमारी पहली फसल पकती है, तो हम वहां जाकर भोग करते हैं।"

"लेकिन अभी 20-25 सालों से तो बहुत कुछ बदल गया है। अब हम जंगल में जाते हैं तो वन-विभाग वाले (जंगलाती) रोक-टोक करने लगते हैं। उन्होंने जैसे जंगल पर अब अपना अधिकार जमा लिया है।"

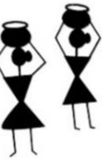

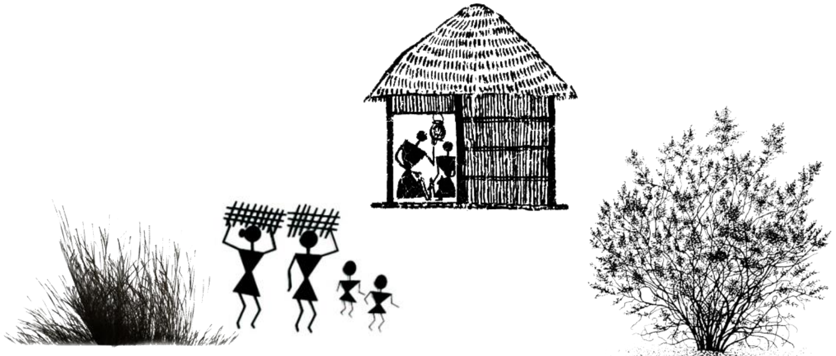

मन्सी देवी मानती हैं, "जंगल से हम हैं, हमसे जंगल है। वो कहती हैं, "जंगल से तो हमारा आत्मा का रिश्ता है।पहले तो पूरा जंगल जैसे हमारा ही था। गांव के लोगों का जंगल, जानवरों, तालाबों, नदी-नालों, पेड़-पौधों से आत्मीयता का रिश्ता था। अगर जंगल में आग लग जाती, तो गांव के मुखिया ढोल बजाकर गांव को इकट्ठा करते, और आग बुझाने के लिए जंगलकी ओर भागते। आग में मिट्टी, पानी डालते, चारों ओर से सूखे पत्ते हटाते, ताकि आग जंगल की ओर ना बढ़ सके, और फिर इस तरह आग बुझाते थे।

मन्सी बताती हैं, "पहले तो कच्ची दीवार बना दी थी, लेकिन अब बड़ी दीवार बना दी है, जिस के कारण हम पशुओं को चराने के लिए भी जंगल में नहीं जा पाते। और,एक काँटों की दीवार भी बना रखी है, जिस के कारण हम और हमारे पशु दोनों ही उन कांटों से चोटिल हो जाते हैं।जंगलाती हम लोगों को देखते हैं, तो हमें धमकाते हैं कि "जंगल क्या तुम्हारे बाप का है, जो जंगल में चले आते हो - पूरा जंगल खत्म कर दिया है।"

"हम कहते हैं, जंगल तो हमारे बाप दादाओं के समय से हमारा है। हम महिलाएं तो सिर्फ़ सूखी लकड़ी लाते हैं, गीली लकड़ी तो हम काटते ही नहीं है, क्यों कि हमारी जाति-पंचायत ने पुराने समय से कायदा बनाया है कि जोभी जंगल से गीली लकड़ी काटेगा उस को समाज द्वारा दंड दिया जाएगा।

"मन्सी जैसे 200 परिवार हैं जिन्हों ने वन अधिकार कानून के अंतर्गत व्यक्तिगत दावे प्रस्तुत किए थे जिनमें से 150 परिवारों को व्यक्तिगत अधिकार पत्र मिले हैं। जिसमें से 35 महिलाओं को संयुक्त नामसे दावे प्रपत्र मिले हैं जिनमें महिला का नाम पहले, और उसके पति का नाम बाद में लिखा गया है। एकल महिलाओं के नाम से भी व्यक्तिगत अधिकार पत्र मिले हैं।

जन चेतना संस्थान इस के लिए 2006 से, वन अधिकार कानून के अंतर्गत समुदाय को व्यक्तिगत एवं सामुदायिक दावे दिलाने के लिए लगातार प्रयास कर रही है। 6500 दावे भरवाए गये जिस में से 4200 व्यक्तिगत दावे के प्रपत्र लोगों को मिले, और 2300 दावे ऑनलाइन करवाये गये। 150 समुदायिक दावे भरवाये, जिसमें से 7 मिले, बाकी जो निस्तार के दावे हैं, उनके लिए महिलाओं की अगुवाई मे संगठन लगातार प्रयास कर रहा है, जिसकी प्रक्रिया फ़िलहाल शिथिल है।

समुदाय के लोगों ने सोच रखा है कि जब तक उनको जंगल में रहने का अधिकार पत्र नहीं मिलेगा, तब तक वह दावे प्रस्तुत करते रहेंगे, और अपने आदिवासी समुदाय के लोगों को भी इस कार्य के लिए प्रेरित करेंगे| अभी भी जिन लोगों के दावे निरस्त हुए हैं उनके बारे में सचिव द्वारा बताया गया कि *"दावों को ऑनलाइन चढ़ाना चालू है, व्यक्तिगत अधिकार पत्र देने की प्रक्रिया में जिला स्तर पर कार्य चल रहा है।"*

अनुसूचित जनजाति और अन्य परम्परागत वननिवासी (वनअधिकारों की मान्यता) अधिनियम 2006 एवंनियम 2008 तथा संशोधित नियम सितम्बर 2012 अधिनियम का उद्देश्य - वन में निवास करने वाली अनुसूचित जनजातियों और अन्य परम्परगत वन निवासी जो वनों में पीढियों से निवास कर रहे है, किन्तु उनके अधकारों को अभिलिखित नही जा सका, के वन अधिकारों एवं वन भूमि में अधिभोग को मान्यता देने और निहित करने के उद्देश्य से अधिनियम लाया गया है |

मन्सी देवी ने बताया कि, "जब तक हम लोगों को अधिकार पत्र नहीं मिला था, तब तक हम लोग डरे हुए थे कि सरकार कब कोई नियम ले कर आएगी, जिसके बाद हमें जंगल से निकालने की बात करने लगेगी। लेकिन हम 2006 से प्रयास करते रहे, जिसके परिणाम में 2012 में हमें व्यक्तिगत अधिकार पत्र मिले। लेकिन अभी भी हमारे सामने चुनौती बनी हुई है कि जिन लोगों के दावे निरस्त हुए हैं, उनके लिए हमारा संगठन, महिलाओं की अगुवाई में आगे कार्य करेगा, जिससे व्यक्तिगत अधिकार पत्र के साथ सामुदायिक अधिकार पत्र भीमिलसके, जिससे हमारी जीवनशैली एवं आजीविका को फ़ायदा होगा, और जंगल में रोक-टोक भी नहीं रहेगी।

"सामुदायिक दावा मिलने के बाद हम अपने जंगल को घने करने, वन उपज बढ़ाने, उस का प्रबंधन और संग्रहण करने, और जंगल को बढ़ाने के लिए भी आगे कीरणनीति तैयार करेंगे |"

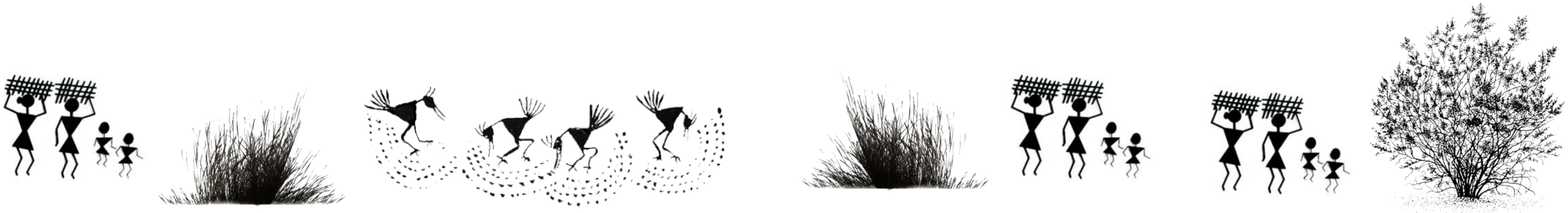

केस स्टडी #4 वन उपज से अन्न सुरक्षा: महकोनी सामुदायिक वन अधिकार का संघर्ष

छत्तीसगढ़

दुर्गा / कौशल्या

महकोनी गाँव के समुदाय ने वन अधिकार के लिए संघर्ष किया, और अपनी अन्न सुरक्षा को सुनिश्चित किया

छत्तीसगढ़ के बलौदा बाजार जिला के महकोनी गाँव के लोगों ने दलित आदिवासी मंच संगठन द्वारा, वन अधिकार कानून केबारे में ट्रेनिंग लेने के बाद, 2015 में, वन अधिकार कानून 2006 के अंतर्गत सामुदायिक दावा भरा, जिसके लिए 2019 में प्रपत्र मिला

1	वन भूमि पर खेती करने वाले कुल परिवारों व वन अधिकार प्रपत्र की संख्या	52
2	वन भूमि पर खेती करने वाले आदिवासी परिवारों की संख्या	42
3	एकल एवं परित्यक्ता महिला परिवार के वन अधिकार प्रपत्र की संख्या	6

दलित आदिवासी मंच संगठन और सरस्वती महिला समूह द्वारा, गाँव मे पुरुषों और महिलाओं को वन अधिकार कानून के बारे में जानकारी दी गयी, और वन अधिकार कानून के तहत उनके अधिकारों की भी। वन के प्रति उनकी भूमिका, की समझ बढ़ाने पर प्रशिक्षण दिया गया, जिसके बाद 2015 में वन अधिकार समिति द्वारा, गाँव के महिलाओं और पुरुषों की एक समान भागीदारी के साथ, लगभग 1,830 हेक्टेयर जमीन पर सामुदायिक दावा भरा गया।

महकोनी को सामुदायिक वन अधिकार प्रपत्र सामुदायिक वन अधिकार प्रपत्र मिलने के बाद, जंगल में मे समुदाय के का निस्तार हेतु मालिकाना हक़ प्राप्त हुआ, किन्तु आज भी वन विभाग द्वारा, ग्रामसभा की अनुमति के बिना ही घेराबंदी कर पेड़ काट कर दूसरी जगहों दुसरे जगह पर बेचा जा रहा है।

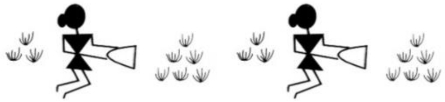

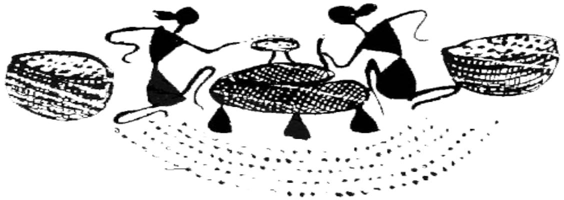

सितम्बर 2018 में वन विभाग के अफसरों द्वारा, कम्पार्टमेन्ट नंबर 382 (जोलगभग 10-12 किलोमीटर का जंगल विस्तार है) में खेतों की मेड़ में लगे सागौन के पेड़ों को काटा गया, वो भी महकोनी गाँव और वहाँ की वनअधिकार समिति की सहमति के बिना। वन विभाग दुवरा 100 सेज्यादा इमारती पेड़ काट चुके थे, तब गाव में इस की जानकारी वन अधिकार समिति, सरस्वती महिला समूह एवं दलित आदिवासी मंच के साथियो को हुई, सब गाव वाले साथ मिलकर तुरंत ही उस स्थान पर पहुँच गए और परिस्थिति को देखते ही अपने जंगल की सुरक्षा को समझते हुए वन विभाग के डेप्युटी रेंजर को पेड़ काटने से रोका और उन पर दबाव बनाया, और साथ मे मिल के पेड़ काटने वाला मशीन एवं कटी हुई लकड़ी को जप्त कर लिया।

ग्राम महकोनी के ग्राम वासियों द्वारा वन विभाग को इमारती लकड़ी काटाने पर रोका गया वह स्थान।

गाव के महिला समूह भी इसी दौरान वन विभाग के अफसरों से अपने वन और अपनी आजीविका को बचाने के लिए बात कर रहीं थीं। लकड़ी काटने की मशीन, और कटी हुई लकड़ी को जब्त करने के समय भी महिलाओं ने पुरुषों को बराबरी का साथ दिया, जो कि बहुत सराहनीय था।

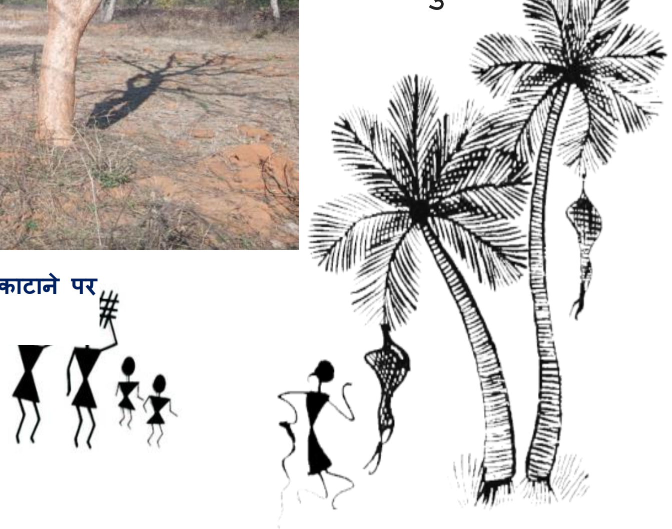

जंगल के उस विस्तार में महिलाएं अपने खेतों के पास में महिलाए खेती करते हुए

जप्त किए हुए पेड़ काटने की मशीन और लकड़ी को गाँव वाले,वनअधिकार समिति के अध्यक्ष के जूराम पैकरा की देखरेख में गाँव मेलेकर आए,और 3 दिन तक संभाल के गाँव में ही जब्ती बना कर रखा। ग्रामसभा में निर्णय लिया गया की वन विभाग के अफ़सर अपनी गलती के लिए जब तक माफ़ी नहीं मांगेगे, तबतक औजार वापस नहीं दिए जायेंगे। जिसके बाद वनविभाग के बड़े अधिकारी, कन्सर्वेटर, डी.ऍफ़.ओ और रेंजर सहित 5 गाडी गाव मे आये। उन्होंने ग्रामसभा की अनुमति के बिना वन के पेड़ काटने पर माफ़ीनामा दिया,तब गाँव वालों ने पेड़ काटने के हथियार और क्काटी हुई लकड़ियों की खाली गाड़ी को छोड़ा। सारी लकडियो को गाव के लोगो ने अपने घरेलु उपयोग के लिए आपस में बाँट लिया।

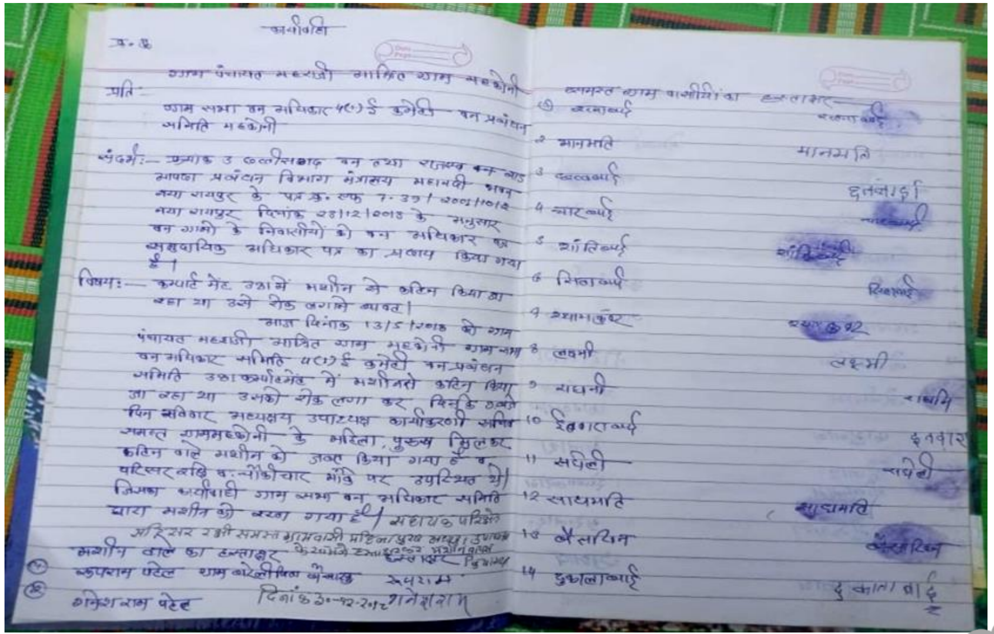

माफ़ीनामा जो वन विभाग के बड़े अधिकारी, कन्सर्वेटर, से लिया गया

महिलाएं कहती हैं की ऐसे ही पेड़ की कटाई करने की वजह से, वनों से वनोपज मिलना कम हो जाता है। महिलाएं वन से महुआ, चार, तेंदु, गोंद, शहद, सिहाल पत्ता और झाड़ू जैसे कईसारे वनोपज अपनी जीविका और आमदनी के लिए लाती हैं।

इससे ही उनकी अन्नसुरक्षा / खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित होती है, परन्तु वन विभाग के ऐसे रवैये और पेड़ में विशेषकर महुआ जैसे पेड़ों की कटाई से, कम वन उपज मिलतीहै, औरउनकी आजीविका और अन्नसुरक्षा पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

महिलाए जंगल से अपने आजीविका और अन्न सुरक्षा के वनउपज को इक्कठा करके बेचते हुए

क्रम	वन उपज	पहले कितना मिलता था	आज कितना मिलता है	उसका उपयोज
1	हर्रा	12 किग्रा	5 किग्रा	खासी होने पर
2	महुआ	4 क्विंटल	2 क्विंटल	लड्डू, तेल व शराब बनाना और
3	दशहराफुटू	10 किग्रा	1 किग्रा	सब्जी बना कर खाते है व व्सीधा बेचते भी है

माहिलाए बताते है कि "*हम वनोपज संग्रहण कर इन्हें खाते है एवं कुछ बचाते है, यह जंगल ही हमारे जीवन का आधार है, जंगल है तो हम है, जंगल बिना वर्षा कैसे होगी और जंगल काटने से इंसान ही नहीं पशु-पक्षी भी मर जायेंगे, हम आदिवासी इस जंगल में वर्षो से रहते आ रहे है, इस जंगल से हमारी संस्कृति जुडी हुई है और इस्सी पेड़, पौधे, जमीन, पहाड़, पठार में हमारे देवी देवता का निवास है*"

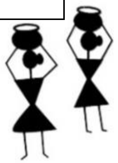

वन अधिकार समिति के अध्यक्ष के जूराम पैकरा बताते है की, “जंगल से हमारी जीविका चलती है, जंगल से हमें खानपान के लिए फुल-फल व्बिमारी के समय ली जाती औषधिया और घरेलु उपयोग के लिए लकड़ी मिलती है.

महिलाओ का जंगलों से काफी नजदीकी जुडाव है। वह वनोपज इक्कठा कर अपने और अपने परिवार की अन्न सुरक्षा और आजीविका सुनिश्चित करती है और साथ में वन का संरक्षण करती है। अपने अधिकार को सुनिश्चित करने वाले वन अधिकार कानून 2006 की प्रशिक्षण लेकर जंगल को बचाए रखने का काम कर रही है।

इस बारे में वन अधिकार समिति के उपाध्यक्ष रम्भाजी बताते है की “यह जंगल हमारा है, इसे बचाने की जिम्मेदारी हमारी है, जंगल को हम नहीं बचायेंगे तो और कौन बचाएगा? यह वन विभाग जो जंगल की रक्षा करने के लिए बना है वही इस जंगल को नष्ट कर रहे है, तो हमें ही बचाने की जिम्मेदारी लेनी होगी।

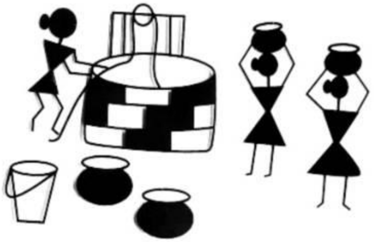
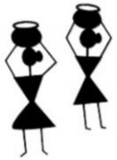

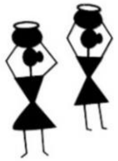

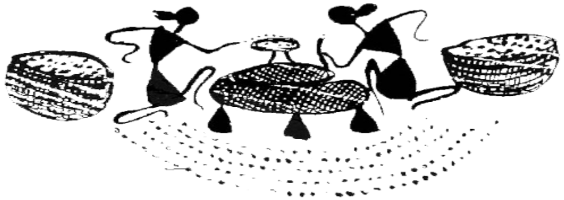

केस स्टडी #5 एकल महिलाओंके वन अधिकार के लिए लंबा सफर

साबरकांठा, गुजरात

मेघा शेठ/दिनेश भोय

महिलाओं को सामुदायिक वन अधिकार प्रपत्र प्राप्त करने के लिए दुर्गम बाधाओं को पार करना पड़ा है, और इस प्रक्रिया में शामिल संस्थानों की प्रतिक्रियाओं की धीमी गति से निपटना पड़ा है। अधिकारों की यात्रा में एकल महिलाओं को विशेष रूप से गंभीर कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। यह के सस्टडी उन महिलाओं के बारे में हैं, जिनकी अगुवाई में, इस अधिकारों के संघर्ष को बल मिला।

परिचय

वनवासी समुदायों के संबंध में हुए ऐतिहासिक अन्याय को ठीक करने के उद्देश्य से, भारतीय संसद ने अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वननिवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006 पारित किया, जिसे लोक प्रिय रूप से वन अधिकार अधिनियम (FRA) के रूप में जाना जाता है। इस के नियमों की अधिसूचना के बाद 1 जनवरी 2008 से, यह कानून देश भर में लागू हुआ।

अधिनियम में महिलाओं के दृष्टिकोण से कई सकारात्मक पहलू हैं। जैसे जमीन के पट्टों पर प्राथमिक धारकों के रूप में उन के नाम दर्ज करना; लघु वनउपज (एनटीएफपी) पर उनके अधिकार को मान्यता देना – जो उनकी वन संबंधी आजीविका को मजबूत करने का काम करता है, और खाद्य सुरक्षा को मजबूत करने की क्षमता रखता है। इस में पुरुषों और महिलाओं के लिए व्यक्तिगत और सामुदायिक वन अधिकार, और परंपरागत वनवासी समुदायों के हक़ों को भी मान्यता देने का प्रावधान है।

कानून, वन वासियों को सामुदायिक अधिकार और आवासीय अधिकार प्रदान करता है, और महिलाओं को ग्राम सभाओं व अन्य स्तरों पर (जहाँ सामुदायिक वनों के शासन और प्रबंधन, या एफ़ आर ए के क्रियान्वयन से जुड़े मुद्दों पर निर्णय लिए जाते हैं) समान प्रतिनिधित्व देने का प्रावधान भी करता है।

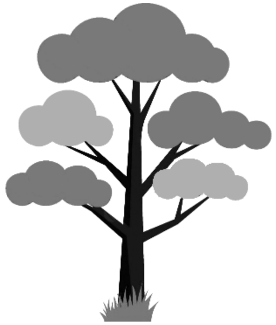

IFR व्यक्तिगत वन अधिकार	CFR (सी एफ आर) - समुदायवन अधिकार	सी आर सामुदायिक अधिकार	पर्यावास अधिकार विशेष रूप से पीवीटीजी और पूर्व-कृषि समुदायों के लिए
वन भूमि पर कब्जा	वन संसाधन	केंद्र सरकार द्वारा वन भूमि का डायवर्जन	प्रथागत आवास के लिए कार्यकाल
निवास	वन उपज का स्वामित्व, उपयोग, और निपटान	ग्राम प्रबंधन सुविधाएं	आजीविका, सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक मान्यता प्राप्त
स्व-कृषक	वन संसाधनों की रक्षा, पुनर्जनन, संरक्षण और प्रबंधन करना		
	एन टी एफ पी संग्रह		

राष्ट्रीय डेटा

2008 से एफ़ आर ए के कार्यान्वयन के बाद, *1,90,056* दावे दायर किए गए हैं, और *14* साल के व्यक्तिगत और सामुदायिक संघर्ष के बाद, *13,17,697.59* एकड़ वन भूमि पर *95,379* स्वामित्व वितरित किए गए हैं। *(*जनजातीय कार्यमंत्रालय-*2021* डेटा के अनुसार*)* हालां कि इन में से कितने दावे महिलाओं के स्वीकृत हुए और कितने पुरुषों के -इसके अलग-अलग आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं।

व्यक्तिगत	**समुदाय**	**कुल**	**एकड़ में भूमि क्षेत्र**
ग्राम सभा स्तर पर दायर और स्वीकार किए गए दावे			
182869	7187	190056	डेटाउपलब्धनहीं
शीर्षक वितरित			
91686	4597	96,283	13,93,414.74

गुजरात के हालात

राज्य सरकार के अनुसार, यहाँ का कुल दर्ज वन क्षेत्र *(*रिकॉर्डेड फ़ॉरेस्ट एरिया या आर एफ़ ए*) 21,647* वर्ग किमी है, जो राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्र का *11.03%* है। राज्य में आरक्षित, संरक्षित और अवर्गीकृत वन, कुल वन क्षेत्र के क्रमशः *66.39%, 13.33%* और *20.28%* हैं।

31 मार्च, *2022* तक एम ओ टी ए *(*जनजातीय कार्य मंत्रालय*)* से लिए गए आंकड़ों के अनुसार एफ़ आर ए दावों की स्थिति*:*

व्यक्तिगत	**समुदाय**	**कुल**	**Acers में भूमि क्षेत्र**
ग्राम सभा स्तर पर दायर और स्वीकार किए गए दावे			
182869	7187	190056	डेटा उपलब्ध नहीं
दावे वितरित			
91686	4597	96,283	13,93,414.74
कुल अस्वीकृत दावे			
2243	57054	59297	

वन क्षेत्रों में रहने वाली अधिकांश आबादी आदिवासी है, और उनकी आजीविका इन वन क्षेत्रों पर निर्भर है।

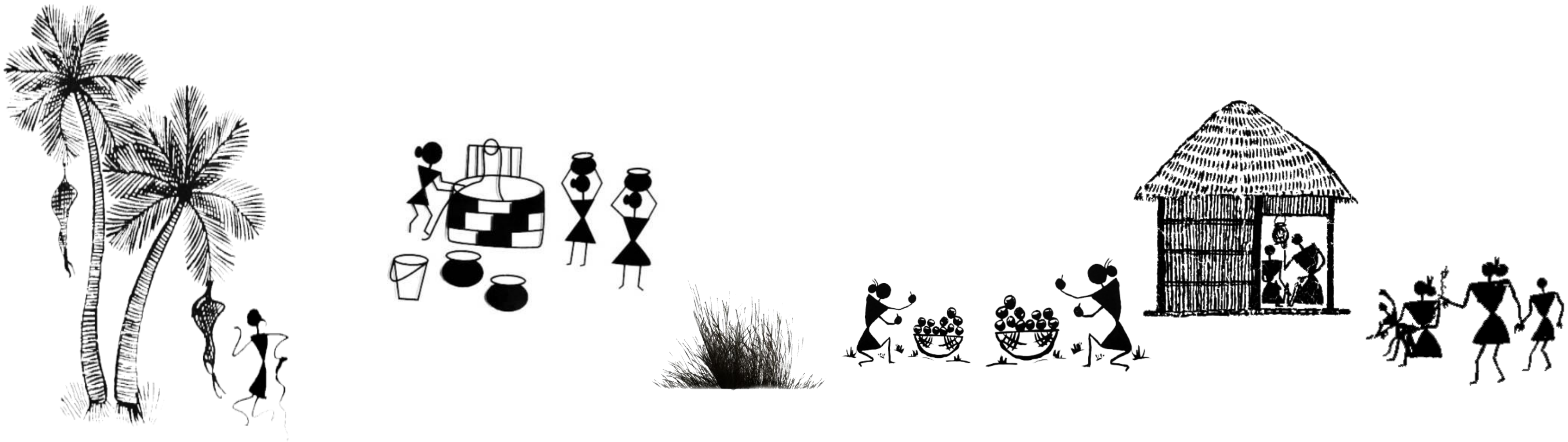

देश की कुल अनुसूचित जनजातियों का *8.1%* (कुल *89.17* लाख), गुजरात में है, जो राज्य की आबादी का *14.8%* है। यह जनजातियां राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल के *11.14%* हिस्से में रहती हैं,[2] जिसका अधिकतम भूभाग एफ़ आर ए के दायरे में आता है।

2008-10 के बीच एफ़ आर ए के तहत दायर वन अधिकार याचिकाओं का अनुमोदन दर केवल *10%* था।

2013 गुजरात उच्च न्यायलय के एफ़ आर ए से सम्बंधित जनहितयाचिकाओं और रिट याचिका पर निर्णय सुनाए जाने के बाद वन अधिकार याचिकाओं की स्वीकृति दर में सुधार आया। *2020* तक इन के अनुमोदन की दर *50%* तक पहुंच गई। लेकिन यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि गुजरात सरकार ने वर्ष *2016* से दावों के आंकड़ों को अपडेट नहीं किया है, और नए दावों पर कार्य करना भी बंद कर दिया है।

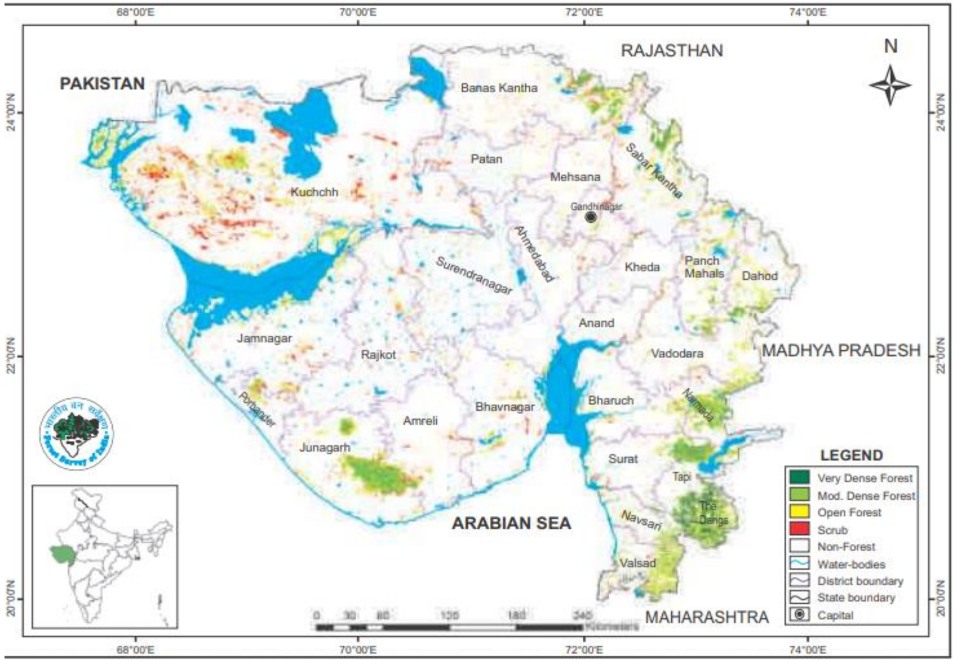

स्रोत:fsi.nic.in-isfr-2019 गुजरातरिपोर्ट

पुराने दावों पर काम बहुत ही मंद गति से चल रहा है, हालांकि नए दावों को ग्राम सभा/ एफ़ आर सी (वन अधिकार समिति) स्तर या अधिकतम एस डी एल सी (उप-मंडल स्तरीय वन अधिकार समिति) स्तर पर स्वीकार किया जाता है।

जून 2011	कुल स्वीकृत दावों को 36,860 (20%) तक ले जाने के लिए अतिरिक्त 19,000 दावों को मंजूरी दी गई और लगभग 113,000 दावों को इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि वे एफ़ आर ए के नियम 13 और 2005 की उपग्रह छवियों द्वारा आवश्यक साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं थे।
जून 2011	दावों की व्यापक अस्वीकृति के कारण गुजरात सरकार के खिलाफ आर्क वाहिनी द्वारा दायर रिट याचिका (संख्या 100/2011)

[2](जनगणना 2011)

3 मई 2013	उच्च न्यायालय ने याचिका कर्ताओं के तर्कों को स्वीकार कर लिया और अपने फ़ैसले में, गुजरात सरकार को सभी खारिज किए गए दावों पर समय बद्‌ध तरीके से पुन विचार और समीक्षा करने के लिए कड़े निर्देश दिए।
जून 2016	स्वीकृत दावों की संख्या बढ़कर 80,540 हो गई जो कुल दायर दावों का 44% है। वास्तव में 102,329 दावे (56%) तबभी 'विचाराधीन' थे। ओ टी एफ डी (अन्य परम्परागत वनवासी समुदाय) के लगभग सभी दावों को 'अपर्याप्त' आधार पर खारिज कर दिया गया। 2015, 2016 से एस डी एल सी / डी एल सी बैठकें नहीं हुई हैं। इससे पहले केवल वन विभाग की राय / सिफ़ारिश से ही किसी भी क्षेत्र को वन क्षेत्र घोषित किया जाता था, या दावों को स्वीकृति दी जाती थी।

साबरकांठा के बारे में

साबरकांठा जिला गुजरात राज्य के पूर्वोत्तर भाग में स्थित है, और 2011 की जनगणना के अनुसार, इसकी जन संख्या 14,73,673 है। जिले को 4 राजस्व उप-मंडलों और 8 तालुकों में विभाजित किया गया है। पोशिना, खेड़ब्रह्मा और विजयनगर तालुका मुख्य रूप से आदिवासी तालुका हैं, और PESA (पेसा) [पंचायत (अनु सूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम] के अंतर्गत आते हैं। ये तालुका पहाड़ी और वन क्षेत्र हैं। (साबरकांठा.nic.in) शेष तालुका मुख्य रूप से समतल क्षेत्र हैं। साबरकांठा में 409 गांवों में से कुल 19,625 आई एफ़ आर (व्यक्तिगत वन अधिकार), और 953 सी एफ़ आर (सामुदायिक वन अधिकार) के दावे दाख़िल हुए थे, लेकिन आई एफ़ आर की अनुमोदन दर बहुत कम – 34%, और सी आर /सी एफ़ आर की केवल 16% थी। और यह व्यक्तिगत वन अधिकार के दावे, महिला-पुरुष के संयुक्त नाम पर दायर हुए, या उनमें महिलाओं का प्रथम मालिकाना हक़ मानागया – इस पर भी संदेह रहा।

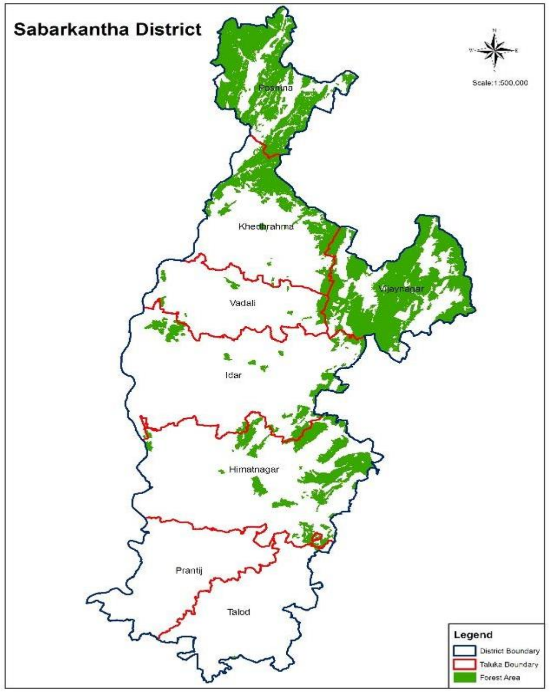

स्रोत:https://forests.gujarat.gov.in/gis-eng.htm

कुल मिलाकर तीन ब्लॉकों-विजयनगर, खेड़ब्रह्मा और पोशिना में, स्वीकृत दावों का अनुपात साबरकांठा जिले के संबंधमें सिर्फ 12.85% है, जो गुजरात में कुल दावों की स्वीकृति दर का केवल एक-चौथाई है।

गुजरात के साबरकांठा जिले के इन तालुकों में वन भूमि के लिए व्यक्तिगत दावों और सामुदायिक दावों को 2008 से विभिन्न चरणों में अनुमोदित किया गया है, लेकिन संघर्ष अभी भी जारी है।

WGWLO (महिला और भूमिस्वामित्व के लिए कार्य समूह) – 2002 से गुजरात के 17 जिलों में महिलाओं और भूमि अधिकारों के मुद्दों पर काम कर रहा है।46 सदस्यों का यह संगठन, वन और महिला अधिकारों को, महिलाओं के भूमि अधिकारों के मुद्दे के बड़े हिस्से के रूप में देता है ।

वन दावों के मामले की तह में जाके यह पता लगाने की आवश्यकता थी कि किस स्तर पर, और किन कारणों से दावों को खारिज किया गया या रोका गया था। दावेदारों का समर्थन करने के लिए, यह जानकारी महत्वपूर्ण थी, ता कि उन्हें पता चल सके की किस आधार पर दावों को मंजूरी नहीं मिल रही, जिससे उन बातों को सुधार कर, वो दावे फिर से दायर कर सकें। एकल और विधवा महिलाओं पर विशेष ध्यान केंद्रित किया गया था, जिससे लैंगिक परिप्रेक्ष्य लाया जा सके।

ज़िला	गांवों की संख्या	IFR दावे प्राप्त हुए	आईएफआर स्वीकृत	अनुमोदन दर (%)	प्राप्त सीआर /सीएफआर दावे	सीआर/ सीएफआर स्वीकृत	स्वीकृति दर
साबरकांठा	409	19625	6679	34%	953	153	16%

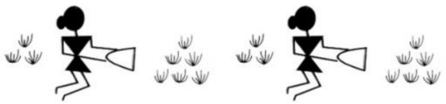

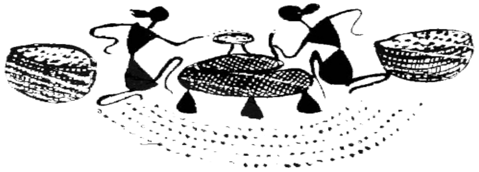

एचडीआरसी *(मानव विकास और अनुसंधान केंद्र)* एक अहमदाबाद आधारित संगठन है, जिसकी शुरुआत *1969* में दलितों, आदिवासियों, अन्य पिछड़े वर्गों, धार्मिक अल्पसंख्यकों, महिलाओं और बच्चों जैसे हाशिए के समुदायों के लोगों के आंदोलनों और संगठनों को बढ़ावा देने और मजबूत करने के उद्देश्य से की गई थी। यह संगठन गुजरात में *16* जिलों के *37* ब्लॉकों में कार्यरत है। इन समुदायों के मानवाधिकारों के मद्देनज़र, इनको व्यक्तिगत और सामुदायिक वनअधिकार दिलाने में, एचडीआरसी तकनीकी और कानूनी मदद प्रदान करता है।[3]

WGWLO पैरालीग लकार्यकर्ता, ग्रामस्तर पर जागरूकता बैठक

2017 से साबरकांठा जिले के तीन ब्लॉकों में आई एफ़ आर और सीएफ़आर के दावे करने में एच डी आर सी आदिवासी और वनवासी समाज को, कानून आधारित तकनीकी सहायता, वकील आधारित कानूनी समर्थन, प्रशिक्षण, और सामुदायिक अभियानों के ज़रिये मदद करता है। पैरा-लीगल वर्कर्स *(PLWs)* का एक जत्था *(कैडर) WGWLO* के साथ काम करता है। इन *PLWs* को वन कानून अधिनियमों के बारे में प्रशिक्षण दिया जाता है। वन अधिकार कैसे हासिल किये जाएं, इस विषय पर, *PLWs* ग्राम समुदायों को संगठित करने का काम करते हैं।

जैसे ही उच्च न्यायालय का निर्णय आया, गुजरात सरकार ने वन विभाग पर न्यूनतम लक्ष्य पूरा करने का दबाव डाला। जो गैर सरकारी संगठन (विशेष रूप से एचडी आर सी) जमीनी स्तर पर एफ़आरए पर काम कर रहे थे, उन्होंने इस अवसर का लाभ उठाते हुए अपने-अपने कार्यक्षेत्रों में एफ़ आर ए के कार्यान्वयन के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उस दौरान, उन्होंने वन अधिकारों के बारे में ग्रामीणों की जागरूकता बढ़ाने की दिशा में लगन से काम किया। विशेष रूप से परिवारों में

---

[3]WGWLO (*वर्किंग ग्रुप फॉर वूमेन एंड लैंड ओनरशिप*) *नेटवर्क, शुरुआतसे* HDRC *कोर ग्रुप के सदस्यों में से एक रहा है।जब महिला और वन अधिकार के मुद्दों पर गुजरात में काम शुरू हुआ, तब* WGWLO *को अपनी यात्रा शुरूकरने के लिए तकनीकी-कानूनी संसाधन, और लोगोंको जुटाने में* HDRC *समेत अन्य कई संस्थाओं ने* (*सामाजिक न्यायकेंद्र, सारथी, कोहेज़न, मारगआदि*) *मदद की।अरावली, बनासकांठा और साबरकांठा जिले में आदिवासियों के विकास और मौलिक अधिकारों के वनअधिकार सुरक्षित करने के लिए काम शुरू किया गया।*

पुरुषों और महिलाओं के संयुक्त नाम पर आई एफ़ आर के फॉर्म भरने, और प्रत्येक ग्रामीण और गांव के प्रबंधन और आजीविका अधिकारों को मजबूत करने के लिए, विशेष रूप से उनका समर्थन किया। जो तकनीकी और कानूनी सहायता की जा सकती थी, उसको सभी लोगों के लिए उपलब्ध कराया।

एचडीआरसी गुजरात भर में, और विशेषतः साबरकांठा के 3 ब्लॉकों में डब्ल्यू जी डब्ल्यू एल ओ के साथ वन अधिकारों पर जागरूकता पैदा कर रहा है, आई एफ़ आर और सीएफ़आर दावों को भरने में लोगों की मदद कर रहा है, और ये सुनिश्चित करने की कोशिश कर रहा है की उनको स्वीकृति मिलने में आसानी हो। आईएफ़आर के दावे संयुक्त (महिला-पुरुष) रूप से, और सीएफ़आर के दावे ग्राम सभाओं की ओर से दाखिल हों, यह भी सुनिश्चित किया जा रहा है।

प्रशिक्षित कैडर की मदद से सही प्रक्रिया को ध्यान में रखके दावे दाखिल किये जा रहे हैं। 2013 के हाईकोर्ट के फ़ैसले के बाद बड़ी संख्या में आई एफ़ आर और सीएफ़आर दावे प्रस्तुत किये गए, और उन में से कई दावों को स्वीकृति भी मिली। इनमें 45 एकल महिलाओं के आईएफ़आर दावे भी शामिल थे।

महिलाएं अपने अधिकारों का दावा कैसे करती हैं

वन अधिकार कानून, वन अधिकारों को कानूनी मान्यता देने का प्रावधान करता है, लेकिन ऐसी कई चुनौतियाँ हैं, जिन्हें ख़ास तौर पर महिलाओं को, अपने दावे प्रस्तुत और स्वीकृत कराने के लिए पार करनी पड़ती हैं।

दावा प्रपत्र भरने से लेकर अपने खेतों का प्रबंधन करना, और उन खेतों पर अपने अधिकार का दावा करने के लिए, महिलाओं को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। कानूनी और तकनीकी लड़ाई लड़ने से पहले, उन्हें अपने-अपने परिवारों और पितृप्रधान समाज के नियमों से जूझना पड़ता है, और फिर वन विभाग के कार्यकर्ताओं और अफ़सरों के (अक्सर) रूखे व्यवहार से।

कई चुनौतियों का सामना कर रही महिलाओं के संघर्ष की बारीकियों को समझने के लिए कुछ उदहारण निम्न हैं:

- विजयनगर प्रखंड के कनादर गांव की वीणा बेन ने कहा कि, “हम शुरू से ही अपनी जमीन पर फसल बोने से नहीं डरते थे, वहाँ तो हम पीढ़ी-दर-पीढ़ी खेती करते आये हैं।” लेकिन, उन्होंने यह भी कहा, “हम को फसल कटाई के समय वन विभाग से डर लगता है। वे आते हैं और फसल पर भारी वाहन चला देते हैं, जिससे हमारी फसलों को नुकसान पहुंचता है।”

- मई *2013* में गुजरात उच्च न्यायलय के आदेश के बाद, *45* एकल महिलाओं को व्यक्तिगत वन अधिकार के पट्टे मिले। दूसरी ओर, एक महिला दावेदार का दावा जिलास्तरीय समिति *(DLC)* द्वारा खारिज कर दिया गया, यह कारण देते हुए कि वो भूमि गोचर भूमि *(*चराई भूमि*)* है। खेड़ब्रह्मा प्रखंड के कोटड़ा गांव की एक एकल महिला, रेखा बेन ने कहा कि, "ग्रामीणों का डर अपने आप में, वन विभाग के डर से कम नहीं है, मैं वन विभाग के खिलाफ आसानी से लड़ सकती हूँ, लेकिन मैं अपने ही लोगों के ख़िलाफ़ कैसे लड़ूँ*?* वो मुझे मेरी ही स्वीकृत भूमि पर खेती नहीं करने देते। एकविधवा के लिए पितृप्रधान समाज के साथ लड़ना बहुत मुश्किल है।*"*

- विजयनगर के महुआना खेतड़ा गाँव की गीता बेन बताती हैं, "मेरे दावे को यह कहते हुए खारिज कर दिया गया था कि *2013* में जमीन घास का मैदान थी, मैं बूढ़ी और अकेली महिला हूँ, और मेरी पूरी आजीविका केवल जंगल से जुड़ी हुई है। वन विभाग, मेरी दावा की गई जमीन पर गड्ढे खोद कर परेशान करता था, मेरे खेत में पौधरोपण करता था, और उनके खिलाफ बोलने पर, मुझे धमकाता था। लेकिन, हमारे गांव के सीएफ़आर को मंजूरी दे दी गई है, जिससे मैं गाँव में रह-गुजर कर पा रही हूँ।"

"अब हमें संगठन स्तर पर, एफ़ आर सी स्तर पर, और सामुदायिक स्तर पर अस्वीकृति के कारणों की वैधता की जांच करनी होगी, ता कि महिलाओं को उन के स्वामित्व के अधिकार मिल सकें"-

किशोर भाई, विजयनगर, पोशिना और खेड़ब्रह्मा में क्लस्टर मैनेजर, और एच डी आरसी के वरिष्ठ सदस्य।

- गीता बेन महुवा-केसुदाफूल, तिमरू पान, शहद, सूखी लकड़ी और अन्य लघु वन उपज *(*एनटीएफपी*)* एकत्र कर के उन्हें उचित मूल्य पर बेचती हैं, और उस आमदनी से साल-भर उन का खर्चा चलता है। वन वासी समुदाय का अधिकारों के लिए आवेदन करने से लेकर, दावा मिलने तक लम्बा संघर्ष रहता है, महिलाओं के लिए यह प्रक्रिया और भी कठिन है।
- कई दावों को बहुत मामूली, और तकनीकी बातों का हवाला देकर खारिज किया गया है

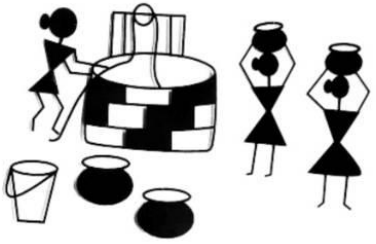

दावों को रद्द करने के कुछ कारण निम्न बताये गए हैं:

(a) कुछ दावे 1980-92 से पहले के कब्जे या अतिक्रमण की जानकारी संलग्न किए बिना दायर किए गए हैं।

(b) *GPS* मान चित्र संलग्न नहीं थे (उपग्रहमानचित्र)

(c) गौचरभूमि (चराई भूमि) के दावों को गैर-वैध माना गया।

महिला दावेदारों के मामले में, उन्हें सूचित किया गया था कि जब परिवार या उसके पति द्वारा भूमि पर दावा किया गया हो, तो वह व्यक्तिगत रूप से अपने नाम पर पट्टे का दावा नहीं कर सकतीं।

दावों की तुलना में कम भूमि क्षेत्र पर अधिकार मिलना, अस्वीकृति, और दावों की लंबित स्थिति के पहलुओं को देखते हुए, क्षेत्र में कार्य कर रहे *NGO* संगठनों को सरकारी विभाग के प्रतिरोध के कारणों का एहसास हुआ। सरकार के व्यवहार को समझने के बाद उन्होंने लंबित दावों को अनुमोदन दिलाने के लिए अधिक काम करने का निर्णय लिया। उन्होंने महिलाओं को आई एफ़ आर और सामूहिक वन अधिकार दावों को एक स्तर पर लाने के लिए रणनीति अपनाई, जिसमें बस्ती स्तर पर महिलाओ का नेतृत्व हो, महिलाओं की वन अधिकार समितियां बनें *(*एफ़ आर सी*)*, और गाँव की एफ़ आर सी में महिलाओं की सुनिश्चित भागीदारी हो। और फिर उन मामलों पर कामकियाजाए जिन में प्राप्त भूमि वास्तविक दावे से कम मिली हो। साथ ही वन विभाग के अन्यायी व्यव्हार - जैसे खेतों में वृक्षारोपण कर देना, या गड्ढे खोद देने जैसे कार्यों को चुनौती देना। महिलाओं को वन अधिकार मिले, और अपने दावे लेने में वो खुद सक्षम बनें, इसके लिए संघर्ष और कोशिशें जारी हैं।

सीएफ़आर प्राप्त करने का परिदृश्य विजयनगर ब्लॉक में आई एफ़ आर प्राप्त करने के परिदृश्य से बहुत अलग नहीं है। एफ़आरसी (वन अधिकार समितियां) काफी हद तक बेमानी हो गई हैं। कई समितियों में अध्यक्ष *(प्रमुख),* या सचिव की मृत्यु हो गई है, - कई सदस्य वृद्ध हैं जो समिति में योगदान नहीं दे पा रहे, और वो महिलाएं ग्राम सभाओं या समिति की बैठकों में सक्रिय नहीं हैं, जिन का नाम प्रॉक्सी के रूप में जोड़ा गया था।

1000 से अधिक परिवारों के लिए 1100 हेक्टेयर वन भूमि पर सामुदायिक दावा प्राप्त करने के बाद भी, जब महिलाएं वन उपज लेने जाती हैं, तो उन्हें बीट गार्ड परेशान करते हैं - और महुआ से बनी शराब की मांग करते हैं।

कोकिला बेन का नेतृत्व बना मिसाल

विजयनगर के कनादर गांव की वन अधिकार समिति की सदस्य होने के नाते, कोकिला बेन व्यक्तिगत वन अधिकारों के दावे की प्रक्रिया और आवश्यक दस्तावेजों की सूची आदि के बारे में जानती थीं, इसलिए उन्होंने अपने आवेदन की स्थिति के बारे में जिला/ पंचायत और ब्लॉक स्तर के कार्यालयों में नियमित रूप से पूछताछ की, जिस के फलस्वरूप उन के दावे को 2012 में अनुमोदन प्राप्त हुआ।

इस बीच, वो अन्य ग्रामीणों, वन अधिकार समिति के सदस्यों, और एच डी आर सी के पैरालीगल कार्यकर्ताओं से प्रक्रिया को बेहतर समझने के लिए प्रयास करती रहीं। इन तमाम लोगों का सहयोग लेते हुए उन्होंने गाँव में सामुदायिक वन अधिकार सम्बंधित जानकारी महिलाओं के दृष्टिकोण से रखने की कोशिश भी की। उन्होंने फॉर्म ए भर के आई एफ़ आर का दावा करने में, महिलाओं की मदद की। वह खुद गांव की अन्य महिलाओं के साथ महुआ के फूल, तिमरू पत्ता, शहद, सफेद मुसदी और केसुड़ा के फूल इकट्ठा करती थीं। उनके समुदाय की महिलाओं ने सामूहिक रूप से वनोपज इकट्ठा करने का निर्णय लिया, ता कि इस से होने वाली आय को ग्राम पंचायत के खाते में जमा किया जा सके, और फिर उसको गांव में महिलाओं और युवाओंकी भलाई के लिए इस्तेमाल किया जा सके।

कनादर की रहने वाली अनीता बेन कहती हैं कि, "कोकिला बेन के नेतृत्व से हमें अपने वन अधिकारों के बारे में काफी समझ मिली है, और हमारी आजीविका भी बढ़ी है, इसलिए हम किसी भी संदेह या परेशानी के मामले में कोकिला बेन के पास सलाह लेने जाते हैं।"

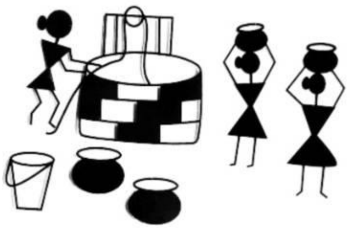
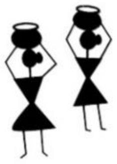
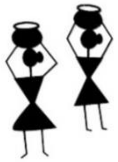
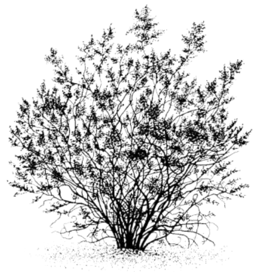

निष्कर्ष:

आईएफ़आर और सीएफ़आर की ये कहानियां हमें बताती हैं कि महिलाओं को अपने अधिकारों के लिए काफ़ी संघर्ष करना पड़ रहा है।

अपनी सीएफ़आर वन भूमि पर गड्ढा खो दने पर वन विभाग के लोग उन पर रोक लगाते हैं, तो उन्हें समझाना पड़ता है की यह गड्ढे चेक डैम सम्बंधित निर्माणकार्य के लिए, या पेड़ लगाने के लिए खोदे जा रहे हैं - और वो भी निर्धारित बजट के अनुसार। अधिकारों के संबंध में प्रशिक्षण, और महिला नेतृत्व के उदय के साथ, जागरूकता पैदा हुई है। लेकिन लघु वन उपज के न्यूनतम निर्धारित दाम (MSP) नहीं मिलते, और उनकी बिक्री से होने वाली आय में ठेकेदार उनको उनका वाजिब हिस्सा अभी भीठी कसेन हीं देते। महिलाओं का अनुबंध प्रणाली में शोषण होना; लघु वनउपज की बिक्री से होने वाले लाभ की साझेदारी और उसका सही उपयोग; और JFM (संयुक्त वन प्रबंधन) या FRC (वन अधिकार समिति) के बीच की प्रतिस्पर्धा जैसी चीज़ों पर, ग्राम स्तर पर लगभग पहले जैसी ही स्तिथि है। एक नेटवर्क के रूप में हम यही पाते हैं की गुजरात में हर जिले में ऐसे ही हालत हैं । यहाँ हर स्तर पर वन अधिकार के मुद्दों पर काम कररहे लोगों के लिए, विशेषकर महिलाओं के अधिकारों को ध्यान में रखते हुए, इस दिशा में काम करते रहना होगा।

लेकिन कोकिला बेन जैसी महिलाएं भी हैं, जो एफ़आरसी की सदस्य हैं, और जिन्होंने अपने अधिकार प्राप्त करने के अलावा अन्य महिलाओं को उन के व्यक्तिगत वन अधिकार दिलवाने में मदद की है। गाँव के सामुदायिक वन अधिकार के दावों को मजबूत बनाने का भी काम किया है। कोकिलाबेन जैसी महिलाएं इस बात का उदहारण हैं कि न केवल व्यक्तिगत वन अधिकारों की लड़ाई, बल्कि CFR के तहत वन अधिकार समितियों (FRC) में भागीदारी कर के महिलाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।

सीएफ़आर और आईएफ़आर के दावे करना और उन्हें प्राप्त करना एक लम्बी प्रक्रिया है। उसके ऊपर, पुरुष प्रधान और संस्थागत नियमों से जूझ के सफलता पाना महिलाओं के लिए और भी कठिन है। भविष्य के लिए हमारी यही कामना है की कोकिलाबेन जैसी कई और महिलाएं आगे आएँगी, और अन्य महिलाओं को उन के व्यक्तिगत वन अधिकार / भू-पट्टे दिलाने में अग्रणी भूमिका निभाएंगी। सभी वन वासी समुदायों को सामुदायिक वन अधिकार मिलें ऐसी भी हमारी कोशिश रहेगी।

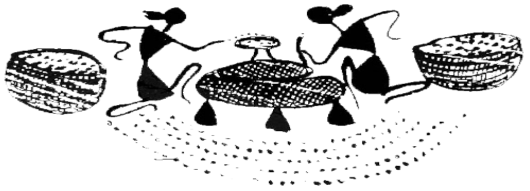

केस स्टडी #6 कोरची परसर संघ ने किया वन क्षेत्र में खान का विरोध

महाराष्ट्र

कुमारीबाई जमकातन

महिला स्वयं सहायता समूह/संगठन पैसे की बचत से शुरू होते हैं। उनका परम/मुख्य उद्देश्य न्यायपूर्ण समाज का निर्माण होता है। सामूहिक महिला बचत परिसर संघ इस मान्यता पर खरा उतरा है। वन अधिकार क्षेत्र मे तथाकथित विकास परियोजना के कारण विनाश के विरुद्ध हो रहे संघर्ष में, मजबूती से खड़े हो के उन्होंने ये साबित किया है।

गडचिरोली जिले में स्वयं सहायता समूहों की शुरुवात, **आम्ही आमच्या आरोग्यासाठी संस्था**(AAA) के ज़रिये 1990 में हुई। कोरची गाँव और आसपास के कुछ गांवो में महिला स्वयं सहायता समूह शुरू होने के बाद बैंक के काम, योजनाओं को लेकर महिलाओं को शासन के दफ़्तरों में हो रही दिक्कतों आदि के मुद्दों पर सिर्फ़ संस्था काम करे, यह संस्था की मान्यता नहीं थी। महिलाओं का अपना संगठन हो, और उसे संस्था मदद करे, यह सोचा गया।

सामूहिक महिला बचतगट परिसर संघ कोरची की स्थापना - 1996

स्वयं सहायता महिला बचत समूहों का बैंक में खाता खोलते समय, बैंक से कर्जा लेते समय आदि कामों में, बैंक कर्मचारियों से बहुत सी तकलीफ़ों का सामना करना पड़ता था। इसी वजह से परिसर संघ का संगठन बनाया गया।

संगठन का उद्देश्य ये है कि स्वयं सहायता महिला समूहों की बचत के माध्यम से, महिलाओं को परिवार, समाज ओर सरकार मे जो दूसरे दर्जे का स्थान दिया जाता है, उसको चुनौती दी जाए। जेसे कि महिलाएं केवल चूल्हा और बच्चे संभालें, निर्णय प्रक्रियाओं में भागीदार न रहें, और

पितृसत्ता के दबाव के नीचे ही रहें, ऐसी गलत मान्यताओं को धक्का दिया जाए। महिलाओं के नाम से कोई संपत्ति न हो, वो सामाजिक परम्पराओं में बंधीरहें,इस सामाजिक नज़रिये को बदलने हेतु संगठन की जरूरत थी। दीवार मजबूत बनाना है तो नींव मजबूत रखनी होगी, इसीलिये संगठन बहुत ज़रूरी है, तो संगठन की ताकत, महिलाओं को खुद के अधिकारों के लिए लड़ने को प्रेरित करे, यही सोच थी।

जंगल हमारा मायका है, इसलिये जंगल की रखवाली करना, उसे बचाना, ये हमारी जबाबदारी है।

यह भूमिका सामूहिक महिला बचतगट परिसर संघ कोरची में, ब्लाक की सभी महिलाओं के लिये स्पष्ट है|

ग्रामसभा में महिलाओं की पहुँच

स्वयं सहायता समूह के ज़रिये गाँव में महिलाओं के सवाल, जैसे पानी की समस्या, आवास योजनाओं में स्थान, बच्चों की शिक्षा के प्रश्न; शराब से आर्थिक, शारीरिक शोषण आदि सवालों को ग्राम पंचायत मे रखना ज़रूरी था। इस बारे में सोचते हुए महिलाएं ग्रामसभा मे शामिल होने लगीं। लगभग सन 2000 में महाराष्ट्र में 'महिला ग्रामसभा आयोजन का शासन' निर्णय निकाला गया। इसका आधार ले कर महिलाएं अपने सवाल लेकर ग्रामसभा में जाने लगीं। इसके कुछ समय बाद, अनुसूचित जनजाति और अन्य परंपरागत वनवासी (वन हक़ की मान्यता) कानून 2006, नियम 2008 और सुधारित नियम 2012 के तहत, जल, जंगल, जमीन का मालिकाना अधिकार ग्राम सभा का ही हो, यह कानून पारित हुआ।

जंगल मे रहने वाले आदिवासी समुदाय ने ही जंगल को बचाया है, और उससे महिलाओं का नज़दीकी संबंध है - जिसमें वो जंगलों को अपना मायका समझती हैं। रोज सुबह से ले कर रात तक तमाम कामों को लेकर महिलाओं का लेन-देन जंगलों से रहता है, इसलिये जल, जंगल, जमीन के मालिक सिर्फ़ पुरुष नहीं, बल्कि महिलाएं भी हैं|

जंगल का संरक्षण

आज 2022 में, कोरची ब्लाक के 95 गांवों को सामुदायिक वनाधिकार (CFR) प्राप्त हुआ है। सन 2010-2011 से, जब से वनाधिकार मिला है, तब से जंगल के हक़दार होने के नाते, जंगल की रखवाली करना, जंगल की कुछ-कुछ जगहों पर फल फूल तथा आवश्यक पेड़ों का वृक्षारोपण करना, जंगल को आग से बचाना, और साथ-साथ जंगल से चोरी रोकने (बाहर के ठेकेदार, जो बिल्डिंग बनाना, बाँध बनाना आदि काम करते हैं, वो चोरी से जंगल की लकड़ियां, बैम्बू आदि बेचने का काम करते हैं) का काम ग्रामसभा कर रही है। इसमें महिलाओं का सक्रीय सहभाग रहा है।

तेंदूपत्ता विक्री का पैसा महिलाओं के बैंक खातों में

ग्राम सभा में होने वाले सभी व्यवहार पारदर्शक हों, और आर्थिक व्यवहार की जानकारी सभी को हो ऐसा ज़रूरी है। निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं को भी साथ लेते रहें और गौण वन उपज जमा करना, बिक्री करना, यहाँ तक ही नहीं, तेंदू पत्ता बिक्री का पैसा महिलाओं के नाम से पासबुक में जमा हो, ताकि वह सही समय पर ज़रूरी काम के लिए उस पैसे का उपयोग कर सकें - इन मुद्दों पर बार-बार चर्चा रखने का एक फ़ायदा हुआ कि अब तेंदू पत्ता का पैसा सीधे बहनों के खाते में आने लगा है। अब, वो ज़रूरत के अनुसार उस रकम का उपयोग करते आ रही हैं।

खनन प्रक्रिया की अगुवाई और संघर्ष

सामुदायिक वनाधिकार क्षेत्रों का ग्रामसभा द्वारा संरक्षण, संवर्धन, पुनर्निर्माण एवं व्यवस्थापन की प्रक्रिया और खनन प्रकल्पों से संघर्षमेंमहिलाओंकीविशेषभूमिकारहीहै।

सामूहिक वन अधिकार मिलने के बाद ग्राम सभाओं ने अपने जंगल क्षेत्र में कुछ काम भी किये। झेंडेपार, नांदली गांवमे 50 हेक्टेयर पर 40,000 बैम्बू का वृक्षारोपण किया गया। ग्राम सभाएं जब जंगल का संरक्षण कर रही हैं - सामुदायिक वनाधिकार का व्यवस्थापन, नियोजन कर,अपने वन आधारित विकास का नियोजन कर रही हैं - उसी वक़्त सरकार की ओर से, जंगल के विनाश करने वाले प्रकल्पों (projects) को बढ़ावा दिया जा रहा है।

सन 2009 में ग्राम सभा सोहले के पास के जंगलों में वन विभाग के स्थानीय कर्मचारी और कुछ नये लोग देखे गए, और उसकी चर्चा गाँव मे होने लगी। एक-दो दिन गाँव के कुछ लोग वन कर्मचारियों के बुलाने पर छोटे पेड़ काटने भी गये। पर जब उनके बरताव में संदेह लगा, तो लोगों ने ग्राम सभा के प्रमुख लोगों को बताया। ग्रामसभा झेंडेपार के लोगों ने सोहले, सोहले टोला के कुछ प्रमुख लोगों से बात की। संस्था कार्यकर्ताओं से भी बात हुई। आसपास के कुछ गाँव के लोगों ने मिल के संस्था कार्यकर्ताओं से सघन रूप से बात की यह तय किया की जिलाधिकारी को निवेदन लिख कर, इस बारे में स्पष्टता मांगी जाए। जिलधिकारी को पत्र लिखकर पूछा गया की जब ग्राम सभाओं ने दावे डाले हैं, तो यह जमीन कैसे अन्य लोगों को दी जा रही है? इस बात का स्पष्ट रूप से जबाब नहीं मिल रहा था। पर यह पता चल गया था की लौह खनिज खननके बारे में बात चल रही थी। जब जब महिला प्रतिनिधि किसी मीटिंग में जातीं या कुछ नई जानकारी सामने आती, तब सामूहिक महिला बचत परिसर संघ की मीटिंग ले कर सभी को अवगत कराया जाता था।

खनन के लिए जनसुनवाई

कोरची ब्लाक में 30 ग्राम पंचायतों के अंदर 133 गाँव हैं, जहाँ पेसा कानून और वन अधिकार कानून लागू है। इसी के बल पर, 30 ग्राम पंचायतों के सरपंच, उपसरपंच, पंचायत समिती, और जिला परिषद सदस्यों ने कोरची ब्लाक में राजनैतिक लीडर्स, सामाजिक संस्थाओं के प्रतिनिधी, महिला बचत समूह परिसर संघ की सदस्याएं, अन्य संगठन प्रतिनिधियों आदि की एक मीटिंग बुलाई। वहाँ पर विचार विमर्श किया गया कि अगर लौह खनिज उत्खनन का विरोध करना है, तो संगठित होने की ज़रूरत है। इसमें किसी एक व्यक्ति, संगठन या संस्था को श्रेय नही मिलेगा, बल्कि यह सामुदायिक काम होगा, जिसमें सबको श्रेय मिलेगा। चाहे कोई भी संस्था, संगठन या फिर राजकीय पक्ष हो, किसी का बैनर भी नहीं लगेगा। साथ ही यह भी तय हुआ किकिसी भी राजनैतिक पक्ष के नेताओं को आमंत्रित नहीं किया जाएगा। यह लड़ाई पूर्ण रूप से स्थानीय लोगों की रहेगी और नेतृत्व भी स्थानीय रहेगा।सामाजिक संस्था के रूप में आम्ही आमच्या आरोग्यासाठी (AAA) शुरू से कानून और निति के बारे में

मालूमात देने और साथ देने की भूमिका मेंथी, इसलिए तयहुआकिउन्हें भीशामिल किया जायेगा। यह नियम बनाया गया और रणनीती तय हुई कि एक बार मोर्चा या संघर्ष करने से इस सवाल का निराकरण नही होगा, तो हमें बार-बार पत्र व्यवहार, बैठक, विचार विनियम करना होगा। जल, जंगल, जमीन के पारम्परिकअधिकारकोसुरक्षितरखनाहोगा। इस पूरी प्रक्रिया में महिलाओं को शामिल करवाने की जिम्मेवारी सामूहिक महिला बचत गट परिसर संघ ने ली।

2011 के अगस्त में (जब कुछ गांवो को सामूहिक वन अधिकार प्राप्त हुआ था), बारिश का समय था, इधर-उधर सभी तरफ़ के नालों में बाढ़ का पानी भरा हुआ था, उस समय महाराष्ट्र प्रदूषण नियंत्रण मंडल की ओर से जन सुनवाई का आयोजन किया गया। फिर भी ग्राम सभा के पदाधिकारी और कुछ महिलाएं, ग्रामसभा की ओर से वाहन व्यवस्था कर के दोपहर 2.00 बजे गडचिरोली जिलाधिकारी कार्यालय पहुँचे। वहाँ पर ग्रामसभा और महिला परिसर संघ की बहनों ने खनन विरोधी आवाज़ उठाई कि, **“वन अधिकार कानून 2006 और पेसा कानून [पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम, 1996] के तहत जल, जंगल, जमीन हमारा है, यही हमारा नारा है।”**उसीसमय गाँव से आई महिलाओं में से एक आदिवासी महिला ने उठकर, “हमें इस क्षेत्र में लौह खनिज खनन प्रकल्प नही चाहिए”, यह बात गोंडी भाषा मे बोली। वो करीबन 15 मिनिट तक बोलतीं रहीं, जिसे बाद में भाषांतरित किया गया। उस पूरे बयान की वीडियो रिकॉर्डिंग भी की गयी थी।

जिला स्तर पर पर्यावरण संरक्षण मंडल की जन सुनवाई के एक महीने बाद, सितम्बर (2011) में कोरची तालुका स्तर पर, कोरची तालुका लौह खनिज खनन विरोधी संघर्ष समिती के माध्यम से कोरची तालुका की ग्राम सभाओं, नागरिकों, राजनीतिक पक्ष के लोगों, व्यापारियों, सरपंचों, सामूहिक महिला बचत संगठन की महिलाओं आदि ने एकजुट हो कर राज्य के मुख्यमंत्री को तहसीलदार के मारफ़त आवेदन देने के लिये प्रदर्शन किया। इस में दूर दराज के गाँव से महिलाओं को,और अन्य लोगों को आने-जाने की सुविधा निजी वाहन चालक मालिकों ने मुफ़्त में दी। लोगों को पानी और खाना देने की व्यवस्था स्थानीय व्यापारियों ने की। एक दिन पूरे तालुका के लोग इसी सवाल के लिये जुट गये। बुलंद आवाज़ में उन्होंने कहा की खनन से हमारी खेती पर असर होगा, हमारी जमीन नष्ट होगी, गौण वन उपज को बाधा पहुंचेगी, साथ ही हमें दूषित हवा, दूषित पानी मिलेगा। हमारे और हमारी बच्चियों पर अत्याचार होने की भी संभावना है। हम अभी सुख और ख़ुशी से जिंदगी बिता रहे हैं। हर साल, हर परिवार को जंगल से गौण वन उपज द्वारा लाखों के उत्पाद मिलते हैं। खनन होने से हमें क्या मिलेगा? बाहरी लोगों के अतिक्रमण से हमारी संस्कृति और परंपरा भी नष्ट होगी। इसलिए हमें जंगल छोड़ना नहीं यह लोगों ने तय किया।

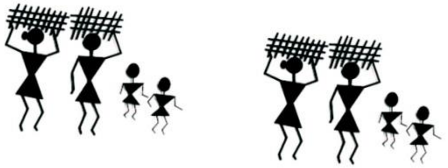

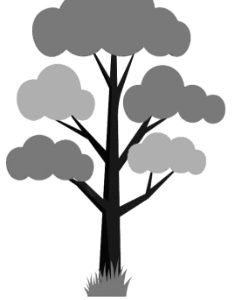

2011 की जनसुनवाई के बादखनन का परिणाम समझाने के लिए दूसरे क्षेत्र के खनन प्रकल्प के लोगों से भेंट किगई।आम्ही आमच्या आरोग्यासाठी संस्थान ने कोरची के प्रमुख महिला-पुरुषों को चंद्रपुर में घुग्गुस ले जाकर (जहाँ कोयला खनन हुआ था) वहाँ के लोगों से मिलवाया। घुग्गुस में खदान शुरू हुए काफ़ी समय हो गया था, फिर भी वहाँ के लोगों को ठीक तरह से लाभ नहीं मिला था। कुछ लोगों को लाभ पैसे के रूप मे मिला, पर जो खुशहाली थी, वो तो नहीं रही। छत्तीसगढ़ के रायगढ़ में भी कोयला खदान का काम हुआ है, वहाँ की स्थिति को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता था।

रूढ़ियाँ, परम्पराएं, रीति-रिवाज़, सामजिक व धार्मिक व्यवस्थापना को कायम रखना, और वन सम्पदा / सम्पत्ति पर जो अधिकार, FRA के तहत, ग्राम सभाओं को मिले हैं, उनको मद्देनज़र रखते हुए प्रस्ताव रखा, जिसमें खनन का विरोध किया गया, और कहा गया की ग्राम सभा की सहमति के बिना वहाँ कोई काम नहीं किया जा सकता।

सांस्कृतिक धरोहर से जुड़ाव: रावपाट गंगाराम घाट यात्रा

झेंडेपार जहाँ पर खनन होने वाला है, वहाँ पर आदिवासियों के देवी-देवताओं की अनेक सालों से पूजा होती है। वो है 'रावपाट', तो उसी जगह पर जात्रा आयोजन किया जाए, ब्लाक के सभी लोग एक जगह आकर देवता की पूजा करेंगे, और केवल पूजा में ही सीमित नहीं रहेंगेयहतयकियागया।... संविधान के 73वें संशोधन के बाद, पंचायत राज व्यवस्था कानून, आदिवासी स्वशासन कानून, वन अधिकार और पेसा कानून से आदिवासी समुदायों को जो अधिकार प्राप्त हुआ है, उस अधिकार, और व्यवस्थापन के बारे में भी चर्चा करनीनिश्चितकिगई। ताकि हमारी आनेवाली पीढ़ियों के युवा-युवतियों को भी जानकारी रहे। वो भी जिम्मेदारी निभाने में साथ रहें ऐसा निर्णय लिया गया।

तब से हर साल फरवरी माह की पूर्णिमा में रावपाठ गंगाराम घाट की जात्रा और अधिकार सम्मेलन नियमित रूप से ग्रामसभा झेंडेपार और महाग्रामसभा कोरची की ओर से आयोजित की जाती है। जंगल हमारी संस्कृती से जुड़ा हुआ है, इसलिए गाँव और ब्लाक के जितने भी युवा-युवती हैं, जिन्होंने आदिवासियों की संस्कृती और परंपरा में कोई नाटक, गीत, डान्स बनाया हो, वो वहाँ पेश करते हैं। उन्हें कुछ इनाम भी दिये जाते हैं। इसके पहले बाहर से सांस्कृतिक ग्रुप के कार्यक्रम रखे जाते थे, वो पूरी तरह से बंद कर दिए गए हैं। वहाँ पर सिर्फ़ मनोरंजन होता था, और बहुत खर्च भी होता था।

दूसरे दिन सुबह से, गाँव के देवता के पास, जहाँ पर खनन होने वाला स्थान है, उस पहाड़ी पर जाते हैं, और पूजा करते हैं। साथ ही जल, जंगल, जमीन अधिकार पर चर्चा और विचार विमर्श किया जाता है| इस मेला जात्रा के समय पूजा के समान के साथ-साथ मिठाई की दुकानें भी रखते हैं। बाल-बच्चे और सभी लोग, '**अधिकार दिन**' का आनंद भी लेते हैं।

तीसरे दिन सुबह, महिला अधिकार के मुद्दों पर स्वतंत्र सभा रखी जाती है। वहाँ ब्लाक के सभी गांवों से महिलाएं तथा महाग्रामसभा[4] के सलाहकार, अन्य विशिष्ट व्यक्ति, गाँव के पुजारी आदि भी रहते हैं। यहाँ पर महिला अधिकार के मुद्दों पर सुझाव दिए जाते हैं।सामूहिक परिसर संघ से आई बहनें, वहाँ सभा का संचालन करती हैं। इससे महिलाओं के बीच, वन अधिकार कानून की समझ बढ़ाने में मदद हुई है। इस चर्चा से महिलाओं को अपनी जिम्मेवारी का भी एहसास होता है।

कोरची ब्लाक के 133 गांवों के लोग, सामूहिक महिला बचत परिसर संघ कोरची से प्रतिनिधित्व करनेवाली बहनें, साथ में काम करने वाली समाजसेवी संस्थाओं के प्रतिनिधी, कोरची ब्लाक के सभी राजनैतिक पक्ष के लीडर्स आदि लोगों ने मिल कर भारतीय संविधान की अनुसूची पाँच के तहत उन क्षेत्रों पर पेसा कानून (1996) के लागू होने के प्रावधानों के बारे में चर्चा की। इन चर्चाओं में बी डी ओ आदि अधिकारियों को जोड़ने का प्रयास भी किया गया। लेकिन उतना सफल नहीं रह।

2017 में दूसरी बार खनन प्रकल्प की जन सुनवाई और संघर्ष -

फिर से प्रशासन और लौह खनिज खनन करने वाली कंपनियों ने मिल कर 2017 में, झेंडेपार की कुल 46.5 हेक्टेयर भूमि, जो CFR (सामुदायिक वन अधिकार क्षेत्र) में आती थी - वहाँ खनन के लिए ग्रामसभा की मान्यता न लेते हुए, परवानगी लेने हेतु, जिले में जन सुनवाई बुलाई।

2011 में बड़े क्षेत्र में एक ही कंपनी की अर्जी थी, 2017 में इसको छोटे-छोटे क्षेत्रों में बांटा गया। इसका कारण जानकार व्यक्तियों के मत में यह था की छोटे क्षेत्र की मंजूरी राज्य सरकार खुद दे सकती है। बड़े क्षेत्र के लिये, केंद्र सरकार की मंजूरात ज़रूरी है, और छोटे खनन क्षेत्र का, पर्यावरण पर विशेष प्रभाव नहीं दिखता। लेकिन आज कोरची तालुका में सोहले, सोहले टोला, भर्रीटोला, आगरी, बोडेना - इन क्षेत्रों में करीब 12

[4]महाग्रामसभा ब्लॉक स्टार के समूहों का गठ जोड़ है जिसमे महिला पुरुष दोनों समान की भागीदारी करते है।

खनन प्रकल्प, 1017 हेक्टेयर पर प्रस्तावित हैं, जिनका एकत्रित रूप से बड़ा परिणाम पर्यावरण और लोगों के आजीविका स्रोतों एवं स्वास्थ्य पर होगा।

सामूहिक महिला बचत गट परिसर संघ का, इस दौरान बारबार संगठन की बैठकें लेकर, सभी महिलाओं को स्थिती से, और अलग अलग सोच-विचारों से अवगत कराने का काम लगातार चल रहा था।पहली जन सुनवाई 9 सितम्बर 2011, और दूसरी 3 अगस्त 2017 को हुई। दोनों जन सुनवाइयों में स्थानीय लोग बड़े पैमाने पर शामिल थे। 2017 की जन सुनवाई में जिले की अन्य तहसीलों से भी लोग समर्थन के लिए जुड़े थे। 2011 की जन सुनवाई की तरह, 2017 की जन सुनवाई में भी झेंडेपार गाँव की रहिवासी और नांदळी ग्रुप ग्रामपंचायत की सरपंच, बबीता नैताम ने, बिना पूर्व तैयारी के, डट कर अपनी बात गोंडी भाषा में जिलाधिकारी और अन्य अधिकारीयों के सामने रखी। लोगों के विरोध को देखते हुए इस जन सुनवाई को तो स्थगित करना पड़ा। दूसरी बात यह भी रही की चार जगह की जन सुनवाई थी, लेकिन एक ही बताई गई, और एक ही ग्रामसभा को नोटिस भेजा गया था, इसलिए भी लोगों ने विरोध जताया।

“आज भी हम सामूहिक परिसर संघ और ब्लाक की महिलाएं खनन का विरोध कर रही हैं, और आगे भी करेंगी”

हम आदिवासी समुदाय के लोग - महिला, बुजुर्ग, नन्हे-मुन्ने बच्चे, महिलाएं-पुरुष - अपने पूर्वजों से सीख लेते हुए, जंगलों की रक्षा और संरक्षण करते आ रहे हैं। तो हमारी जिम्मेदारी है की जंगल को पूरी तरह से हरा-भरा रखें, और जन्मो-जन्म हमें पालने वाला दाता, हमारे मायके का रिश्ता हमारे लिए सदा बने रहे। हम इसे नष्टनहीं होने देंगे - यही हमारी सामूहिक महिला बचत गट परिसर संघ की हज़ारों महिलाओं का बयान है।

लड़ेंगे! जीतेंगे!! जल, जंगल, जमीन आदिवासी समुदायों के हैं

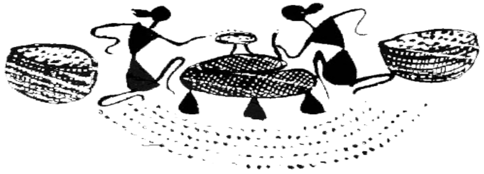

केस स्टडी #7 लम्बे संघर्ष के बाद वनराजी जनजाति को मिला जमीन पर अधूरा मालिकाना हक़

पिथौड़ागढ़, उत्तराखंड
खीमा जेठी

2008 में उत्तराखण्ड में वन कानून लागू होने पर ग्राम पंचायत के सदस्यों के द्वारा 55 परिवारों ने व्यक्तिगत दावे - यानि कृषि व आवास के लिए कुल 300 हेक्टेयर जमीन के लिए आवेदन किया। इस प्रक्रिया के चालू होने के 5 साल बाद, 26 परिवारों को जमीन पर मालिकाना हक़ मिला। 29 परिवारों के नाम पर आवास व कृषि भूमि अधिकार प्राप्त करने के लिए, 2015 से कार्यवाही की गई। लम्बे समय के बाद 2021 में इन दावे प्रपत्रों पर सरकार ने कार्यवाही की, जिस के बाद 7 जून 2022 को, 28 परिवारों के नाम पर मालिकाना हक़ मिले।

परिचय

उपरोक्त कार्य करने के लिए ग्राम वन समीति, ग्राम प्रधान, ग्राम विकास अधिकारी, राजस्व विभाग और वन विभाग के लोंगों के साथ इस काम को आगे करने की रणनीति बनाई गई।

इन जंगलों से समुदाय के लोगों को घास, लकड़ी, चारा, पत्ती, जड़ीबूटी, कन्दमूल, फल आदि मिलते हैं।अपनी आजीविका बढ़ाने के लिए ये समुदाय, जंगलों के इन उत्पादों का उपयोग करते हैं। राजी जनजाति समुदाय के लोग जंगलों में निवास करते हैं, जिस में वो जंगलों की रक्षा और उन की देखरेख करते हैं। अपनी आजीविका चलाने के लिए घास, लकड़ी आदि जंगलों से लेकर आते हैं।

मालिकाना हक़ मिली वन भूमि को, राजस्व भूमि धोषित करने के लिए, शासन व प्रशासन को आवेदन दिया गया। लेकिन अंत में यह पाया गया कि वन अधिकार कानून की प्रक्रिया बिना अपनाए, लोगों को जो हक़ मिले, वोतो वास्तव में अधूरेहैं। राजी जन जाति लोगों के सामूहिक दावे भरने के लिए बहुत प्रयास किये गये। लेकिन उनके दावे प्रपत्रों को निरस्त कर दिया गया। इन सामूहिक दावे प्रपत्रों को पूर्ण करने के लिए पुनःप्रयास किया जा रहा है।

वन विभाग व अन्य विभागों के द्वारा, राजी जनजाति के सामूहिक दावों को मंजूरी देने की मंशा नहीं दिखाई दे रही। क्यों कि वन विभाग, राजस्व विभाग से, जितनी जमीन राजी जनजाति को दी जानी है, उतनी ही जमीन की मांग कर रहा है। जिला स्तर पर जिलाधिकारी महोदय, जिला समाज कल्याण विभाग व डी.एफ़.ओ. के द्वारा इस मामले को गम्भीरता से, वन कानून के मुताबिक़ लिया जाना चाहिए। सामूहिक दावों को सफल बनाने के लिए राजी जनजाति के द्वारा सामूहिक रूप से दबाव बनाने के लिए, जिला मुख्यालय में जाकर अपनी समस्या को रखने की रणनीति बनाई जा रही है।

मीडिया और सरकारी विभागों तक बात पहुँचाने के लिए ग्राम स्तर पर किये गये कार्यों के ऑडियो व वीडियो बनाये गए हैं।और जो कार्य नहीं हो पा रहे, जैसे सामूहिक दावे प्रपत्रों को पूर्ण करना, उसके बारे में भी ध्यान दिलाया जा रहा है। सूचना के अधिकार अधिनियम के तहत, उत्तराखण्ड में वन कानून 2006 के तहत, वन अधिकार दावों की स्थिति पर जानकरी ली गई। यह पूछा गया की वर्तमान समय तक, कितनी जनजातियों के कितने परिवारों को भूमि का आवंटन किया गया है, और कितने हेक्टेयर भूमि में।

2009-10 में वन कानून के तहत ग्राम स्तर पर भरे गये व्यक्तिगत दावे निम्न हैः

भरे गए व्यक्तिगत दावे	दावे पत्र दिए गए 2013 में
भक्तिरवा 10 व्यक्तिगत दावे	भक्तिरवा 9
किमखोला 35 व्यक्तिगत दावे	किमखोला 16
कुटा चौरानी 28 व्यक्तिगत दावे	कुटा चौरानी 12
मदनपूरी 17 व्यक्तिगत दावे	मदनपूरी 8
औलतड़ी 10 व्यक्तिगत दावे	सरकारी ग्रांट की भूमी को दिया गया|

उपरोक्त दावे प्रपत्रों में से 2013 में 45 परिवारों को दावे पत्र दिये गये है।

औलतड़ी गाँव के 10 दावे भरे गये थे। राजस्व भूमि होने के कारण दावे प्रपत्रों को उपखण्ड समीति डीडीहाट के द्वारा निरस्त किया गया। औलतड़ी गाँव में 10 परिवारों के लिए शासन प्रशासन के साथ पैरवी करने के बाद, सरकारी ग्रान्ट की भूमि को दिया गया, जिस में उन परिवारों को नक्शा और खाता खतौनी दी गई है।

प्रक्रिया

उपरोक्त प्रक्रिया को करने में बहुत समय लगा, जिस में समय-समयपर अधिकारियों के साथ बैठक करने, और जन पैरवी करने से सफलता मिली। राजी समुदाय को मालिकाना हक़ दिलवाने के लिए, समुदाय के लोगों द्वारा समय-समय पर प्रस्ताव दिये गये। ग्राम पंचायतों में मुद्दों को उठाया गया, और अधिकारों के लिए आवाज़ उठायी गई। व्यक्तिगत दावे मिलने के बाद सभी लागों में खुशी का माहौल है। और प्रधानमंत्री पेंशन के तहत आवेदन भरकर भी लोग लाभ ले रहे हैं। अब महिलाओं ने सामूहिक दावे भरने का निर्णय लिया है। इसके लिए सरकारी विभागों में आवेदन देने की प्रक्रिया शुरू की गई है। सभी लोगों ने अपने अधिकार पाने के लिए लड़ाई शुरू कर दी है। “अपने अधिकार ले कर रहेंगे” नारे लगा कर, वो आगे बढ़ रहीं हैं।

लाभ और भविष्य के कार्य

लोगों को यह अहसास हुआ है की जमीन उन की है। महिलाओं को भी अपने अधिकारों के बारे में पता चला। लेकिन यह बात सामने आई की दावे और नाप के काम, उस प्रक्रिया से नहीं हुए, जिससे वन अधिकार कानून के तहत हक़ पत्र मिलने चाहिए। शासन ने लोगों को थोड़ी सी जमीन दे कर संतुष्ट करना चाहा, और सामुदायिक हक़ की मांग पे भी ठीक से सहयोग नहीं किया। **सामूहिक दावों की स्थिति** वर्तमान समय में

नए दावे नही भरे गये हैं, जो दावे पहले भरे गये थे, उन को उपखण्ड समीति ने निरस्त कर दिया। अब सामूहिक दावे भरने की प्रक्रिया 5 गाँवों में चलाई जा रही है।

उपजिला धिकारी जी द्वाराउ पखण्ड स्तरीय बैठक में वन कानून 2006 की चर्चा करते हुए।

ग्राम स्तरीय वन समीति की बैठक में अपने दस्तावेजों को जमा करते हुए। ग्राम वन समीति के सदस्यों के साथ।

समाजकल्याण अधिकारी के साथ साक्ष्यों को पूण्र करने परचर्चा।

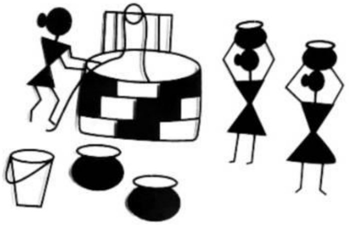

किमखोला में व्यक्तिगत दावों के साक्ष्यों व गाँव का पैमाइस करते हुए। राजस्व विभाग, समाज कल्याण, वन विभाग व ग्राम वन समीति के सदस्यों के साथ बैठक।

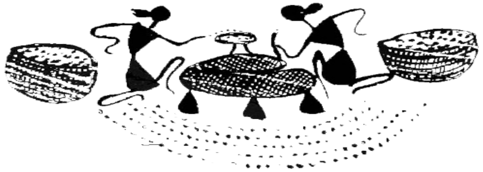

केस स्टडी #8 उम्मीदों की किरण बनी बालकी देवी गरासिया

राजस्थान

रणछोड़ देवासी

संघर्ष का सामना करते हुए घर से बाहर निकली, पंचायत में सरपंच चुनाव लड़ा, चुनौतियों का सामना करना पड़ा। वन अधिकार समिति बनाई, 40 दावे तैयार करके समिति द्वारा भौतिक सत्यापन करवाया, वो दावे उपखंड समिति को पहुंचवाये, और परिवारों को व्यक्तिगत दावे मिले।

मैं बालकी देवी गरासिया, सिरोही जिले के पिंडवाड़ा ब्लाक के ग्राम पंचायत अचपुरा के कोटड़ा गांव की रहने वाली हूँ। मैं 33 सालकीहूँ, मैंने बी ए

तक पढ़ाई की है। मेरे पिताजी के पास 80 बकरियां थीं। कभी-कभी, मैं भी अपने पिताजी के साथ जंगल में बकरियों को चराने जाती थी। उस दौरान, मैंने जंगल में कई चीज़ों को देखा था। उस समय, जंगल बहुत हरा-भरा था, वहां रह रहे परिवार अपनी आवश्यकता के अनुसार, चीज़ें लेकर आते थे। आदिवासी परिवारों का जंगल से बहुत जुड़ाव था, और उस जंगल की रखवाली आदिवासी परिवार ही करते थे।

बचपन से लेकर आज तक, संघर्ष का सामना कर के मैंने अपनी एक अलग पहचान बनाई। मेरे ऊपर बचपन में ही परिवार की जिम्मेदारियों का भार आने के कारण पढ़ाई करने में मैं असफल रही, लेकिन उच्च शिक्षा प्राप्त करने की ललक ने मुझे ससुराल में आकर भी अपनी पढ़ाई को जारी रखने का हौसला दिया, और मैं ने बी ए तक पढ़ाई की।

संघर्ष का सामना करते हुए, मेरे अन्दर एक बदलाव आया- मुझे लगा आदिवासी समुदाय के हितों के लिए मुझे कार्य करना होगा। मैंने अपने मन में ठाना था कि मुझे आदिवासी समुदाय के लिए एक उम्मीद की किरण बनना है।

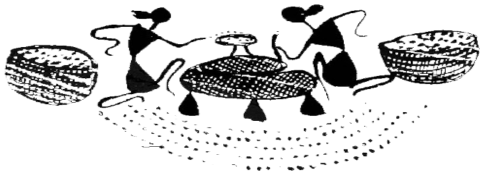

> **मैंने अपने परिवार से संघर्ष करते हुए, स्वयं घर से बाहर निकलना आरम्भ किया। मुझे अगर किसी चुनौती का सामना करना पड़ा, तो उसका सामना करते हुए मैं अपने परिवार को मनाते हुए आगे बढ़ी। मैं बचपन से देखती आर ही थी कि आदिवासी समुदाय के लोग हर स्तर से पीछे रह रहे हैं- शिक्षा का अभाव, जागरूकता की कमी आदि होने से वो सरकारी योजनाओं का लाभ लेने से वंचित रह रहे हैं।**

मेरा सपना था कि मैं इन आदिवासी समुदायों के बीच में रहकर, उनके लिए कुछ काम कर सकूं। इस कार्य हेतु मुझे सुनहरा अवसर वर्ष 2010 में मिला जब मेरा जुड़ाव 'जन चेतना संस्थान' से हुआ।

उनके कार्यकर्ताओंने मेरे परिवार को आकर बार-बार समझाने का प्रयास किया, और मुझे सरपंच का चुनाव लड़ने के लिए बोला गया। मेरे सामने 5 प्रभावशाली उम्मीदवार खड़े थे। पंचायती राज चुनाव आया, मेरी इच्छा थी कि मैं सरपंच पद का चुनाव लड़ूँ, लेकिन परिवार के लोगों ने मुझे चुनाव लड़ने से इंकार कर दिया। लेकिन उन उम्मीदवारों के साथ मैंने भी अपना नामांकन भरा, जिस के बाद मुझे कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा। मेरे समक्ष खड़े सभी प्रभावशाली उम्मीदवार सामान्य वर्ग से थे- उनके द्वारा मेरे चुनाव प्रचार में बाधा डाली जाती थी। पूर्व सरपंच काफ़ी प्रभावशाली थे, मेरे प्रचार करते समय वह खुद भी उस जगह पहुँच जाते थे, लेकिन मेरे बुलंद हौसलों ने मुझे हिम्मत दी। मेरे बुलंद हौसलों नेंही नहीं, बल्कि सभी समुदाय की महिलाओं, एवं आर्थिक रूप से कमज़ोर समुदाय ने भी अपना पूर्ण सहयोग दिया। मैं ने डट कर सरपंच चुनाव लड़ा, और मैं सरपंच चुनाव जीत गयी, और मेरे बुलंद हौसलों ने मुझे आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया।

उस के बाद जनचेतना संस्थान के सहयोग से नेतृत्व विकास के प्रशिक्षण किये गए-जिसमें पंचायती राज के बारे में, विभिन्न अधिनियमों के बारे में, मनरेगा, पेसा, वन अधिनियम, और ग्रामपंचायत विकास योजना (GPDP) पर क्षमतावर्धन हुआ, जो आगे के कार्य और गाँव के विकास कार्य में सहायक रहा। मेरे बुलंद हौसलों ने मुझे आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया।

अचपुरा ग्राम पंचायत

अचपुरा ग्राम पंचायत में वनक्षेत्र	2968 हेक्टर
परिवारों की संख्या	315
जनसँख्या	1499
व्यक्तिगत दावे प्रस्तुत किये गए	120
व्यक्तिगत अधिकार पत्र मिले है	47
2011-12 में व्यक्तिगत दावे भरे गए	25
उनका फोलोअप	जिले स्तर पर फ़ाइल कार्यवाही
सामुदायिक दावे प्रस्तुत किये	02
सामुदायिक अधिकार पत्र मिले	0
दावे निरस्त होने के कारण	विभागीय रिपोर्ट ना होने के कारण और ऑन लाइन अपडेट न होने के कारण विलम्ब हो रहे हैं|

वर्ष 2010 में जब मैं सरपंच बनी, उस समय पांच गांव, अचपुरा ग्राम पंचायत के अंतर्गत आते थे। उसमें 03 गांव वन विभाग के दायरे के अंतर्गत आते थे, जिन वनों में लगभग 40 परिवार रहते थे। मेरा सपना था कि मैं इन आदिवासी परिवारों के बीच रहकर उनके साथ हो रहे अन्याय को सही करूँ। जो उनको जंगल से बेदखल किया जा रहा था, उनको पुनः उस जंगल पर अधिकार मिले। इसके लिए मैं ने कई बार अपनी ग्रामपंचायत में बैठक का आयोजन किया। वन अधिकार समिति बनाई, और दावों को समिति के सामने पेश किया। 40 दावों के पूरे दस्तावेजों को तैयार करके, समिति द्वारा भौतिक सत्यापन करके, उपखंड समिति को पहुंचवाये। उस में से 31 परिवारों को व्यक्तिगत दावे मिले। कुछ परिवार रह गए - उनके व्यक्तिगत दावे खारिज किये गए, जिन में दस्तावेज़ों की कमी पाई गयी।

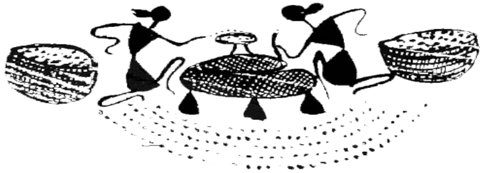

मैं ने अपने गांव का विकास देखते हुए सामुदायिक दावे की भी मांग की, ताकि आदिवासी समुदाय को अपना हक मिल सके। समुदायके कई परिवार, कई पीढ़ियों से जंगल में रह रहे थे, उन आदिवासी परिवारों की आजीविका का मुख्य स्रोत जंगल ही थे, जंगल से वह अपनी आजीविका चलाने के लिए कंदमूल, जड़ी-बूटियां, घास, फल-फूल, शहद, आवश्यकता के अनुसार लकड़ी, आदि बेचकर अपना गुजारा करते थे। लेकिन आज़ादी के बाद जब वन कानून आया तब से आदिवासी परिवारों की आजीविका के स्रोत बहुत ही कम हो गए - उनको जंगलों से बेदखल किया जाता रहा।

लेकिन वन अधिकार अधिनियम 2006 आने से, पुनः वनों की उपज से समुदाय की आजीविका सुनिश्चित हो पायगी| वह अपने परिवार के लिए पूरे सालके लिए अनाज खाने के लिए रखते हैं, और बाकी फसल स्थानीय बाजार में बेचकर अपनी आजीविका निर्वाह करते हैं। इसके साथ ही खेती के बीचमें, चीबड़े, (ककड़ी) चील, बथुआ, मूली, जैसी मिश्रित फसलें अन्य फसलों के साथ में करते हैं।

2006 के अधिनियम के तहत, वन उपज का संग्रहण करने का अधिकार ग्रामसभा को है, लेकिन यह अधिकार नहीं दिया जा रहा है। इसके कारण वर्तमान में सामुदाय अपनी आजीविका के स्रोत कम होने से, वन से पलायन कर, पत्थर घड़ाई वगैरह का काम करने लगे हैं, जिससे वह गंभीर बीमारी ‘सिलिकोसिस’ से पीड़ित हो रहे हैं। कई नव-विवाहित युवतियां विधवा हो रही हैं, उनके घर उजड़ रहे हैं। इन आदिवासी परिवारों की स्तिथि को देखकर मैं हमेशा परेशान रहती हूँ।

सरपंच पद पर नहीं रहते हुए भी मैं ने हमेशा आदिवासी परिवारों को प्राथमिकता दी और उन की मदद के लिए तत्पर रही। वर्ष 2015 में, मैं किसी भी पद पर नहीं थी, जिसके कारण मुझे कई बार असफलता भी प्राप्त हुई, लेकिन आदिवासी समुदाय के साथ हमेशा खड़े रहने के कारण मुझे पुनः 2020 में पंचायतीराज चुनाव में सरपंच का पद हासिल करने में सफलता मिली। आस-पास के जंगल से, आदिवासी समुदाय के छोटे बच्चे, स्कूल के बाद जंगल जाते, और वहां से वन उपज लाते। फिर रोड पर खड़े होकर आने-जाने वाले पर्यटकों को बेचते, और उन पैसों से घर में दैनिक उपयोग की चीज़ें खरीदते। सन 2020 में पंचायती राज चुनाव लड़ने में मुझे पहले जैसी ही चुनौतियां का सामना करना पड़ा |

सभी चुनौतियां का सामना करते हुए मैं सरपंच पद पर जीत के आई। सरपंच बनते ही पुनः कार्य भार संभालते हुए, मैंने अपना ध्यान उन परिवारों के ऊपर रखा जोवनक्षेत्र में रह रहे थे।अपनी ग्राम पंचायत के जीपीडीपी प्लान में मैं ने प्रधानमंत्री आवास योजना हेतु आवेदन करवाया, और 35 परिवारों को योजना के तहत स्वीकृति जिला परिषद द्वारा दिलवायी। संघर्ष का सामना करके आवास तो स्वीकृत करवा कर लाए, लेकिन वन विभाग ने उन को बनने से रुकवा दिया।

मैं ने पंचायत समिति की सामान्य बैठक में मुद्दा उठाया कि इन परिवारों के आवास बनाने हेतु, वन विभाग के दखल को हटाया जाये, ताकि समुदाय के मकानों का निर्माण किया जा सके - जिस से आदिवासी परिवार के कच्चे झोपड़े, पक्के मकानों में बदल सकें।

मै ने देखा कि गांव को टडा वन क्षेत्र में आ रहा है।मैं ने चुनाव के समय समुदाय को जो वादे किए थे, उन वादों को मैंकै से पूरा करवाऊंगी, उसके लिए मैं ने दिनरात मेहनत की। कई कार्य वनक्षेत्र में स्वीकृत करवाकर, उन कार्यों को पूरा करवाया - जैसे वन विभाग के दायरे में श्मशान घाट पर चार दीवारी का कार्य, रपट निर्माण का कार्य, एनीकट का कार्य, और पानी के लिए बोरिंग करवाने का कार्य।

मेरा सपना है कि आदिवासी समुदाय की महिलाओं के नाम से जमीनी कागज़ात बने। इसके लिए मनरेगा के तहत स्वीकृत होने वाले व्यक्तिगत कार्य के लिए,परिवारों की फ़ाइलें तैयार करवाई गईं, ताकि महिलाओं के नामसे जमीनी कागज़ बन सके। महिलाओं का नाम जमीनी कागज़ों में होने से, उनके साथ हो रही हिंसा को भी कम किया जा सकता है।

बालकी देवी गरासिया, हमें सिखाती हैं की हमें हिम्मत कभी भी नहीं हारनी चाहिए|

मुश्किल से मुश्किल घड़ी में भी हमें, हमारे साहस वधैर्य से काम लेना चाहिए |

केस स्टडी #9 सालेह महिला समूह ने वनधन केंद्र से संकट के समय लिया लाभ

कोरची ब्लॉक, जिला गढ़चिरौली

पद्मा उइके

महामारी जैसे मुश्किल समय में लॉकडाउन से बिगड़े हालातों को स्थानीय अर्थव्यवस्था के माध्यम से हल करने का ग्राम सभा ने समाधान निकाला, ये कहानी खपाठ गंगाराम घाट, कोरची ब्लॉक, गढ़चिरौली जिले के प्रयासों के सुखद परिणामों और समुदाय पर उसके प्रभावों को प्रदर्शित करती है।

परिचय

26 अगस्त 1982 को गढ़चिरौली जिला भूतपूर्व चंदरपुर जिले से अलग हुआ। चंदरपुर महाराष्ट्र के उत्तरपूर्व किनारे पर स्थित था, इस जिले की सीमाएं तेलंगाना और छत्तीसगढ़ राज्य से मिलती थीं। नक्सलवाद गढ़चिरौली में दूर तक फैला हुआ था, और ये जिला कई बार नक्सलवाद से प्रभावित “लालगलियारे” (Red Corridor) के नाम से चिन्हित किया जाता था।

गढ़चिरौली कीजनसँख्या - 2011 के संसस डाटा केअनुसार:

कुल जन सँख्या -	10,72,942
पुरुष जन सँख्या -	5,41328
महिला जन सँख्या -	5,31,614
अनुसूचित जाति जन सँख्या -	1,20754 (11.25%)
अनुसूचित जन जाति जन सँख्या -	4,15,306 (38.7%)
साक्षरता दर -	74.4%

जिले में जनजातियों की जन सँख्या के 34% से अधिक होने की वजह से, और 76% क्षेत्र ग्रामीण और वन आच्छादित होने की वजह से, जिले को जनजातीय और अर्ध विकसित क्षेत्र की श्रेणी में रखा गया है । ये जिला बांस और तेंदूपत्तों के लिए प्रसिद्ध है । धान इस जिले की प्रमुख फसल है । ज्वार, अलसी, तूरऔरगेंहू, जिले में होने वाले अन्य कृषि उत्पाद हैं । उच्च जैवविविधता क्षेत्र होने की वजह से, इस जिले में लोगों की आजीविका को, विशेषकर वन आधारित (लघुवनउपज / गैर काष्ठ वन उत्पादों) आजीविकाओं को मज़बूत किये जाने की काफ़ी संभावनाएं हैं।

पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) PESA एक्ट 1996, अनुसूचित जनजाति और अन्य परंपरागत वननिवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम 2006, जिसे वन अधिकार कानून (FRA) के नाम से जाना जाता है, यहाँ ग्रामसभा के निर्णय लेने की क्षमताए वं विकास योजना बनाने को कानूनी रूप से सशक्त करते हैं। वन अधिकार, ग्रामीण एवं वनवासी महिलाओं की आजीविका व घरेलू आवश्यकताओं को पूरा करने का महत्वपूर्ण आधार बने हैं। वन अधिकारों ने महिलाओं को, पितृ प्रधान सामाजिक सन्दर्भ के चलते और व्यक्तिगत भूमि अधिकारों की मान्यता के आभाव में, स्वावलम्बन प्रदान किया है।

फरवरी 2021 की जनजातीय कार्य मंत्रालय की प्रगति रिपोर्ट के अनुसार अभी तक 19,24,417 व्यक्तिगत वन अधिकार और 77,502 सामुदायिक वन अधिकार के दावे प्रस्तुत हुए हैं । महाराष्ट्र में दायर दावों में से 1,65,032 व्यक्तिगत वन अधिकार और 7084 सामुदायिक वन अधिकार दावों को स्वीकृति मिली है। । महाराष्ट्र, अभी तक वन अधिकार अधिनियम के क्रियान्वयन में सबसे अच्छा प्रदर्शन करने वाला राज्य है, जो आदिवासी समुदाय को लघु वन उत्पादों पर आधारित आजीविका कमाने के अवसर प्रदान कर रहा है।

भारतीय जनजातीय सहकारी विपणन विकास परिसंघ (TRIFED), सरकारी सगंठन है, जो 27 राज्यों के 307 जिलों में लघु वन उपज/ गैर काष्ठ उत्पादों की उपलब्धता, विशेषकर वन आश्रित जन जाति समुदाय के बीच, जन धन कार्यक्रम के क्रियान्वयन के लिए कार्यरत है। गैर काष्ठ उत्पादों का संग्रहण और बिक्री, जनजातीय समुदाय की आय में 40-60% का योगदान करती है, और इन उत्पादों का मूल्यसंवर्धन (value addition), उनकी आयको तिगुना या चारगुना तक करने की क्षमता रखता है। भारतीय जनजातीय सहकारी विपणन विकास परिसंघ (TRIFED)का काम जनजातीय समुदाय की समस्याओं से जूझने का प्रयास करता है - जैसे उनके पास जमीन /मकान हों भी तो अक्सर उन पर स्वामित्व का अधिकार नहीं होता; लघु वन उत्पादों का संग्रहण करने पर प्रतिबन्ध; बिचौलियों द्वारा उन का शोषण; राष्ट्रीय पार्कों या अभयारण्यों से उन का विस्थापन; वन से लगे गांवो में विकास का अभाव आदि।

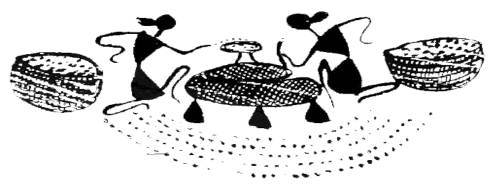

आमची आमच्या आरोग्या साठी (AAA), गढ़चिरौली में 1984 से विभिन्न समुदायों के बीच काम कर रही है।इन समुदायोंके स्वास्थ्य, शिक्षा, आजीविका, और महिलाओं के सशक्तिकरण के मुद्दों पर काम करते हुए, इन्हें आत्मनिर्भर, स्वायत्त और मजबूत बनाने के लिए AAA कार्यरत है।

संस्था ने जलवायुपरिवर्तन, गैर-टिकाऊ / अवहनीय (unsustainable) सतत खेती, वनोंकी प्रबंधन व्यवस्था की जानकारी देना, सामूहिक प्रबंधन व्यवस्थाओं को मजबूत करना, कृषि से जुड़ी वैज्ञानिक पद्धतियों की जानकारी देना, और बाज़ार से जुड़ी जानकारियाँ (marketing) उपलब्ध करना, जैसे मुद्दों पर काम करने का निर्णय लिया है।

यहाँ के समुदाय खेती पर अत्यधिक निर्भर हैं, और उनके पास ऐसे आजीविका स्रोतों की कमी है जो जलवायुपरिवर्तन से कम प्रभावित होते हैं। इसके अलावा, लघुवनउत्पादों और फसलों की बिक्री से कमाई बहुत कम होती है, जिसके कारण इन समुदायों की बदलाव झेलने की क्षमता भी बहुत कम है। इस के फलस्वरूप, आदिवासी अर्थव्यवस्थाएं बाज़ार पर और अधिक आश्रित होती जा रही हैं, जिस से इनकी आत्मनिर्भरता और खुद से आजीविका चलाने की क्षमताओं पर बुरा प्रभाव पड़ रहाहै।

ग्रामीण / जन जातीय अर्थव्यवस्था में महिलाओं की स्थिती:

ग्रामीण और जनजातीय परिप्रेक्ष्य में, हमने महिलाओं को अधिक आर्थिक गतिविधियों में व्यस्त पाया, और पुरुषों की तुलना में, शारीरिक रूप से भी अधिक श्रमकरते हुए पाया। ऐसा देखा गया है कि महिलाएं अधिकतर कृषि कार्यों, किचन गार्डनिंग, पशुपालन, और लघु वन उपज के संग्रहण और बिक्री में पुरुषों की तुलना में ज्यादा ग्रस्त रहती हैं। इसके बावजूद जब घर और समुदाय से जुड़े निर्णय लेने की बारी आती है, तो उनकी बात अक्सर नहीं सुनी जाती।

वन धन केंद्र की स्थापना-

बाज़ार पर बढ़ती निर्भरता के सन्दर्भ में हम ने कोरची ब्लॉक, विशेषकर जहाँ संस्थाएं स्थानीय स्तर पर कामकर रही हैं, वन धन केंद्र स्थापित करने की प्रक्रिया प्रारंभ की। समुदायकी सहमति से, समानता सुनिश्चित करने के लिए, स्त्री और पुरुष बराबर की संख्या में भागीदार हों, ऐसा अनिवार्य नियम बनाया गया। 2019 के गर्मियों के मौसम में, इस कार्यक्रम की सफलता सुनिश्चित करने के लिए, संस्थाके स्थानीय प्रतिनिधियों ने जी जान से मेहनत की।

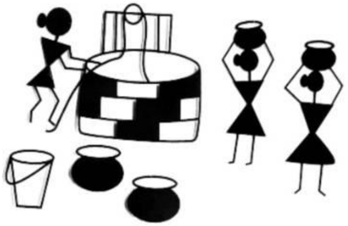

रवपाठ गंगाराम घाट वनधन केंद्र, गढ़चिरौली जिले के कोरची ब्लॉक में स्थित है । इस केंद्र के स्थापित होने से पहले पड़ोसी राज्य छत्तीसगढ़ से बिचौलिये, आढ़ती और दुकानदार, गैरकाष्ठ वनउत्पाद (लघुवनउपज) खरीदने कोरची ब्लॉक में आया करते थे।अक्सर स्थानीय लोग, इनके धोखे में आकर, अपने उत्पादों को कम दाम पर बेच देते थे, क्यों कि उन्हें अपने उत्पादों के वास्तविक दाम की जानकारी ही नहीं थी। निरक्षर परिवार, मुख्यतःमहिलाएं, इन परिस्थितियों में हमेशा कमज़ोर पड़ जाती थीं।

आने-जाने पर लगे नियंत्रण, और बाज़ार तक पहुँच न हो पाने के कारण, कोविड महामारी के दौरान अन्य क्षेत्रों की तरह यहाँ महिलाओं को भी सबसे अधिक नुक्सान हुआ, क्यों कि बाहरी लोगों का ग्रामीण क्षेत्रों में आने पर प्रतिबन्ध था, और समुदाय के लोग भी बाहर जाने में असक्षम थे।

वन धन योजना पिछले वर्ष ही प्रारंभ की गयी और सौभाग्यवश, क्षेत्र के एक वन धन केंद्र को स्थानीय स्तर पर गैर काष्ठ वन उत्पादों को खरीदने के लिए रिवोल्विंग फंड भी उपलब्ध करा दिया गया था। 2020 में 4 वन धन केंद्र कोरची ब्लॉक में चल रहे थे।

इन सब केन्द्रों में गंगाराम घाट वनधन केंद्र मुख्य रूप से तीन ग्रामसभाओं - साल्हे, भारितोला और बोडेना के सहयोग से शुरू हुआ (और चल रहा है), इस लिए इस का बहुत महत्त्व है।ये केंद्र, हर परिवार से एक पुरुष और एक महिला की भागीदारी, और एकल महिला परिवारों का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के प्रावधानों की वजह से भी विशिष्ट है। परिवार में अगर केवल एक महिला या एक पुरुष हो, तो उस स्थिति में भी मेम्बरशिप के नियम लचीले रखे गए।

शुरुवात में रवपाठ गंगाराम घाट वन धन केंद्र को स्थानीय गैर काष्ठ वन उत्पाद खरीदने के लिए 5 लाख रुपयों का अनुदान प्राप्त हुआ। ये तय हुआ की कुछ समूह ही इन उत्पादों को इकठ्ठा करेंगे, 2 समूह बोडेना से, 1 समूह भारितोला से, और 2 समहू साल्हे से गाँव स्तर पर गैर काष्ठ वन उत्पाद इकठ्ठा करने के लिए चुने गए। इसके अतिरिक्त बोडेना गाँव का समूह “बुढाल पेन समूह, जिसके सचिव और अध्यक्ष पदों पर महिलाएं थीं, ने अन्य समूहों से गैर काष्ठ वनउत्पादों को इकठ्ठा करने का निर्णय लिया। श्रीम ती सुमित्राबाई और कुमारोबाई गोटा, बुढाल पेन समूह की वर्तमान सचिव व अध्यक्ष हैं ।

बुढाल पेन समूह को वनउत्पाद एकत्रित करने, भण्डारण और खरीद का पारंपरिक ज्ञान व क्षमता है - विशेषकर महुआ के फूलों को चुनकर इकठ्ठा करने, सुखाने और बोरों में भरकर भंडारण करने को लेकर इन्हें विशेष अनुभव प्राप्त है । वे हमे बताते हैं की यदि वे इन्हें कुछ महीनों के लिए रखते हैं, और बाद में बेचते हैं, तो इन्हें इन उत्पादों के अधिक दाम प्राप्त होते हैं । बुढाल पेन समूह के 15 पुरुषों और 15 महिलाओं ने, सन 2021 में, 15 क्विंटल महुआ फूल इकठ्ठे किये। उन फूलों को बाद में 45 रुपए प्रति किलो बेचकर, उन्होंने 11 हज़ार रुपए का लाभ कमाया। इस कार्यमें महिलाओं और पुरुषों ने संयुक्त प्रयास किये, लेकिन खरीद और भंडारण में पारंपरिक ज्ञान का प्रयोग करने में महिलाओं का योगदान अधिक रहा। उन के द्वारा ये महत्वपूर्ण निर्णय भी लिया गया कि प्राप्त लाभ का उपयोग समुदाय की आपात आवश्यकताओं के लिए किया जायेगा ।

इस सामूहिकता और स्वायत्तता ने कोविड-19 के दौरान पैसे की कमी से उबरने में लोगों की मदद की, और संयुक्त रूप से कमाए इस पैसे को समुदाय हित में लायागया। साथ ही ये इस बात का भी उदाहरण बना की कैसे समुदाय अपने हित के लिए इस तरह के कदम ले सकता है।ये प्रयास महिलाओं के वनों के साथ उन के सहजीवी रिश्ते की वजह से, उनके नेतृत्व और सहभागिता से लाभ कमाने की क्षमता की वजह से, और सामूहिक और नैतिक जिम्मेदारी के भाव से काम कर पाने के कारण संभव हुआ।

"अगर हम महुआ के फूलों को व्यक्तिगत (अलग-अलग) रूपमें बेचते हैं तो लाभ आढ़ती को होगा, न किसब को।अब हमारे पास अपने खाते में अपनी बचत है" - कुमारोबाई

महिलाओं ने न सिर्फ़ प्राकृतिक आपदाओं से प्रभावित समुदायों के पुनर्निर्माण के कदम उठाये, बल्कि इन आपदाओं के दौरान, महिलाओं की दूरदर्शिता और तत्परता का भी नमूना देखने को मिला। समुदाय के प्रति अपने नैतिक समर्पण के भाव का जीता जागता, शक्तिशाली और संयुक्त प्रयास का उदहारण महिलाओं ने दिखाया। जब महिलाएं, प्राकृतिक संसाधनों पर अपना अधिकार और स्वामित्व हासिल करती हैं न तो वे न केवल इन संसाधनों के संरक्षण के लिए काम करती हैं, बल्कि समाज के संवर्धन के लिए इन से जुड़ी व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए भी संघर्ष करती हैं।

“एकट्या ने विकलो असतोतर एकाले च पैसे भेट ले असते, सगळ्या लेनाय. आता आमच्या खात्या मंदी पैसे हाय”

ये सफलता बहुत छोटी (कम समय की), मगर फिर भी महत्वपूर्ण है क्योंकि ये पहले वर्ष में प्राप्त सफलता है । अगले वर्ष जब इस गाँव के अन्य समूह, वन उत्पादों को खरीदने के लिए आगे आये, तो इस समूह की महिलाओं ने वन उत्पाद एकत्र करने का अपना निर्णय वापस ले लिया, क्यों कि उन्हें लगा ये सभी के हितमें रहेगा। अगर एक ही छोटे गाँव के समूह के लोग एकत्र की गई वन उपज खरीदेंगे तो किसी को भी लाभ नहीं होगा । इसलिए उन्होंने दूसरे वनधन समूहों को (जिनमेंअधिकतर पुरुष नेतृत्व मेंथे) अन्य समूहों से उत्पाद खरीदने को कह दिया ।

बुधालपें वन धन समूह की महिलाओं को आर्थिक सफलता मिलने के बाद उन पर पुरुषों को नेतृत्व करने देने का दबाव आने लगा। इस से हमें यह सीखने को मिला कि महिलाओं को नेतृत्व में लाने के बाद उनकी जगह सुनिश्चित करने के लिए भी काफ़ी प्रयास करने की ज़रूरत होती है, जिससे वे अपनी योग्यता के दम पर अपने अधिकार मांग सकें, नकि दूसरों के लिए अपने पद त्याग कर दें।

निष्कर्ष

जनजातीय समुदाय और वनआश्रित समुदायों के लिए वन उपज और उस से होने वाले लाभ को बढ़ाने के लिए, उत्पादों के मूल्य संवर्धन की प्रक्रिया, और बाज़ार से उन्हें सीधे जोड़ने के लिए (जिस से बिचौलियों द्वारा उनका शोषण न हो) अधिक प्रभावी कदम उठाने की आवश्यकता है। व्यापार के लिए नई रणनीतियां का प्रयोग करने के साथ-साथ व्यवस्था को ऐसा होना चाहिए की उस में सभी वर्ग के लोगों की - विशेषकर महिलाओं की- सहभागिता रहे। सफलता की वन अधिकार अधिकार कानून के पारित होने के बाद, खास कर महिलाओं के दृष्टिकोण से, यह कहानी हमें वन आश्रित समुदायों की ज़रूरतों को बेहतर समझने में मदद करती है।और लघु वनउत्पादों की बढ़ोतरी के लिए अधिक प्रयासों एवं निवेशकी आवश्यकता के बारे में भी सजग करती है।

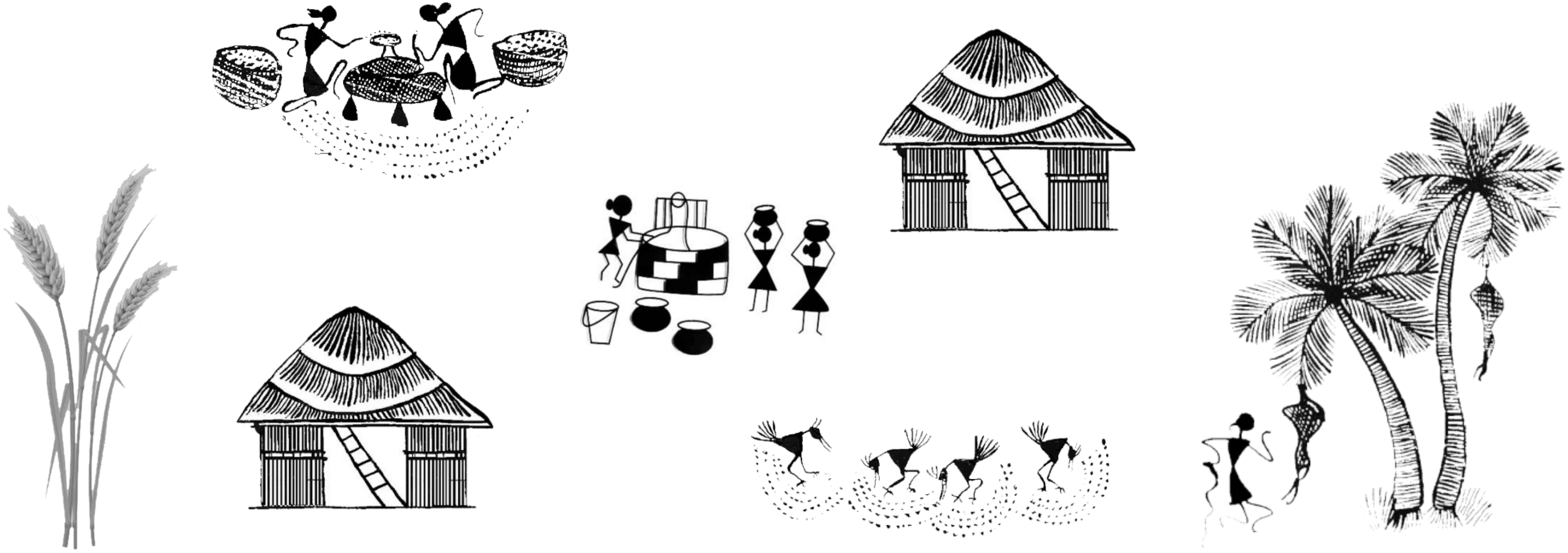

केस स्टडी #10 बीज प्रकृति की अनमोल विरासत, हम महिलाएं करेंगी इनकी हिफ़ाज़त

जिला उधमसिंहनगर, उत्तराखंड

हीरा झंगपानी

पृष्ठभूमि: बुक्सा आदिम जनजाति की महिलाओं का मुख्य काममजदूरी पर निर्भर है। महिलायेंमहिला कल्याण संस्था के माध्यम से, स्वयं सहायता समूह के साथ जुड़ीं, उसके बाद 20 गॉव की दो-दो महिलाओं को जोड़ते हुए समूह को और विस्तृत कियागयाऔर संगगठन बनाया। संगठन ने महिला अधिकारों के मुद्दों को लेकर काम किया, फिर सामूहिक मजदूरी करती रहीं। और उन्होंने अपने-अपने किचन गार्डन में सब्जियांजैविक खाद से उगाने का प्रयास किया। उस दौरान पारम्परिक बीज को लेकर प्लानिंग भी की गयी,व "बीज बचाव" नाम से एक यात्रा भी निकाली।

इन को बनाने के लिए मिट्टी जंगल से लाई जाती है। बुक्सा समुदाय ने इस पारम्परिक तरीके के बीज बैंक को अभी भी जीवित रखा है। अलग-अलग गाँव से बीज इक्कठे करके आदान-प्रदान किया जाता है और उन्हेंसुरक्षित रखा जाता है। साथ ही समुदाय के लोग पारम्परिक बीज बैंक के इस तरीके का प्रचार प्रसार भी कर रहे हैं, और अपनी बीज बचाओ परम्परा को भी सुरक्षित रखने का प्रयास कर रहे हैं।

उसके बाद, एक गाँव - जागनपुरी में, एक “बीज बैंक” बैक का गठन भी किया गया। लॉकडाउन के दौरान पारम्परिक बीज बैंक (बीज संरक्षण केन्द्र) का संचालन किया गया। ऐसे बीज बैंक, 5 गाँव गाव मे संचालितहुए।

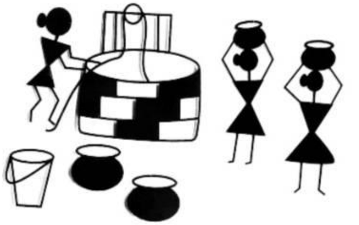

धीरे धीरे लुप्त होती जा रही है मिटटी के कोठले बनाने की यह कला, और उससे जुड़ा ज्ञान।

विभिन्न पारम्परिक फसलों के बीजों को भविष्य के लिए सुरक्षित रखने का काम बीज बैंक निभाते हैं। बुक्सा समुदाय द्वारा मिट्टी और भूसे को मिलाकर छोटे बड़े आकार के बीज रखने लायक ढाँचे बनाये जाते हैं, जिन्हे फिर सुखाया जाता है। इन मिटटी और भूसे से बने '**कोठलों**' में हर प्रकार के बीज रखे जाते हैं। इनको वहाँ रखा जाता है, जहाँ चूल्हा जलता है, जिससे उनमें नमी नहीं आती। ऐसा करने से उस बीज बीजों में वर्षों कीड़े नही लगते।

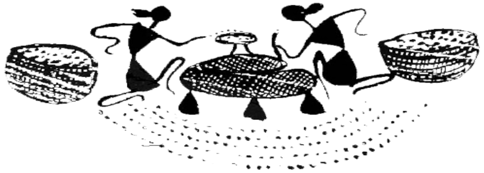

कुछ मुख्य बिंदु - बीजबैंकसेजुडाव

- पारम्परिक बीज बैंक के माध्यम से महिलाओ की ताकत और पहचान बनाना और उन्हें संगठित करने का यह एक प्रयास है
- महिलाओं के इस प्रयास से बीज बैंक संरक्षण कार्यक्रम पर समझ बनी है
- बीज बैंक बनाने के मौके से समुदाय में सामूहिकता की भावना को बढ़ावा मिला है

पारम्परिक बीजों को बचाने के लिए गांवों मे, महिला समूहों के साथ बीज बैंक का गठन किया गया है, उन के बीच एक जट होकर काम करने की भावना और बीजों का अदान भी बढ़ा है

पारम्परिक चीज़ें, जो लुप्त होती जा रही हैं, उसको बरकरार रखते हुए, महिलाओं को संगठित किया गया है

“हम बहनों की है शान;

पारम्परिक बीज बैंक से है हमारी पहचान”

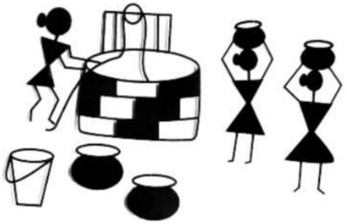

निष्कर्ष: वन अधिकार का महिला के साथ जुड़ाव - सरोकार और रणनीतियाँ

सोमा के पी, ऋचा औदीच्या, शुब्धा देशमुख

मकाम वन अधिकार समूह

महिलाएँ वन अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी रही हैं, एवं पारिस्थितिकी योद्धा और वनों के संरक्षकण के रूप में ना केवल पूरे देश में बल्कि पूरी दुनिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रही हैं। महिलाओं की पर्यावरण संरक्षक के रूप में भूमिका अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार की गई है एवं अकादमिक और सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा इसका दस्तावेजीकरण भी किया गया है। महिलाओं की इस भूमिका को मान्यता दिए जाने के लिए नारीवादी कार्यकर्ताओं द्वारा भी आहवान किया गया है एवं सरकार तथा अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं से भी वन संरक्षण और शासन में महिलाओं की अग्रणी भूमिका को मान्यता देते हुए महिलाओं के ज्ञान, उनकी क्षमताओं और वन संरक्षण में उनके प्रतिनिधित्व में निवेश करने की अपील की गई है।

इस संकलन में शामिल की गई की प्रत्येक कहानी हमें जंगलों के संरक्षण और अपने खुद के और समुदायों के वजूद को बनाए रखने में वन समुदाय में **महिलाओं की केंद्रीय भूमिका** के बारे में बताती हैं। है महिलाओं का कहना है “जंगलों के बिना जीवन नहीं है, हम जंगलों के बिना नहीं रह सकते” (वन-निवासी - राजस्थान आबू रोड प्रखंड सिरोही)। उनके लिए इन दोनों को अलग करना नामुमकिन है। इन कहानियों में महिलाओं ने अपने जीवन और अपने-अपने क्षेत्र की महिलाओं के बारे में लिखा है, वे अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक प्रथाओं में पिरोए गए रोज़मर्रा के रिश्तों के बारे में बताती हैं जिन्हें प्रकृति के साथ आपसी लेनदेन के माध्यम से विकसित किया गया है। इन महिलाओं और पुरुषों की रोजमर्रा की जरूरतों और संस्कृति और आजीविका से जुड़ी प्रथाओं में सदियों पुरानी पर्यावरण-संबंधी यादें समाई हुई हैं।

सामंजस्यपूर्ण सामाजिक और सामुदायिक शासन प्रथाओं और पद्धतियों के विकसित होने का कारण सदियों पुरानी प्रथाओं के आस-पास बुनी जाने वाली व्यवस्था जो आदीवासी और अन्य परंपरागत वन समुदायों की संस्कृति और पहचान में गहराई से समा गई है। फिर भी महिलाएं अपने संघर्षों की बात करती हैं, जहाँ इन समुदायों और इलाकों पर विकास के नाम पर पितृसत्ता, विकासवाद और अत्यधिक दोहन थोपे जाने के चलते,

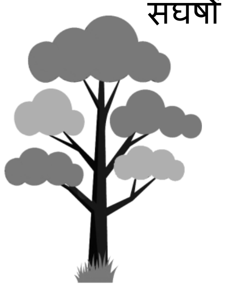

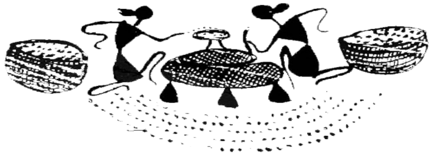

जिसमें इन परंपराओंपरम्पराओं को बनाए रखने के रखरखाव और संसाधनों के संरक्षण में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका तेजी से ओझल होती जा रही है।

इस धारणा के विपरीत कि आदीवासी समुदाय समतावादी होते हैं, हम इन कहानियों में पाते हैं कि महिलाओं को अपने अधिकारों और समाज में सम्मान जनक स्थान पाने के लिए संघर्ष करना पड़ा है। हालांकि आदिवासी समुदायों में उनकी जीवन शैली को बनाए रखने और जंगलों के संबंध में आजीविका के लिए महिलाओं द्वारा किए गए श्रम को मूल्यवान माना जाता है, लेकिन इसके बावजूद, घरों में जब उत्तराधिकार या निर्णय लेने में अपनी आवाज उठाने की बात आती है तो महिलाओं को गहरी जड़ें जमा बैठी पितृ सत्तात्मक मान्यताओं के साथ भी संघर्ष करना पड़ता है, जो उन्हें बराबरी का दर्जा दिए जाने के आड़े आती हैं। महिलाओं ने लघु वन उपज के संग्रहण के साथ-साथ परिवारों के निर्वाह में सहभगिता देने के लिए काम के बोझ को झेलते हुए और आर्थिक मोहताजी से विवश होते हुए भी, संसाधनों तक पहुँचने और कुछ आमदनी अर्जित करने के लिए वनों को अपनी आत्मनिर्भरता/स्वायत्ता मजबूत करने के साधन के रूप में देखा है, विशेष रूप से संकट के समय में। जानवरों की देखभाल से लेकर भोजन और जलाऊ लकड़ी के संग्रहण और जड़ी बूटीयों से उपचार तक, अपनी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए, जैसे हाल ही में कोविड लॉक डाउन के दौरान देखा गया में, इसीलिए लिंग के दृष्टिकोण से भी जंगलवन, संसाधनों के रूप में और समाज में अपनी स्वायत्ता स्थापित करने के साधन के रूप में भी महिलाओं के लिए महत्व रखते हैं - संरक्षक और संवर्धक के रूप में, पोषक एवं अनुरक्षक के रूप में और साथ ही निजी ससाधनों तक पहुँच के अभाव में जीवनयापन के ज़रिए के रूप में।

पेसा अधिनियम आदिवासी समुदायों को वन शासन में स्वायत्तता का दावा करने का अधिकार देता है लेकिन इस अधिनियम का दायरा पाँचवी अनुसूची में शामिल किए गए क्षेत्रों तक ही सीमित है और महिलाओं के लिए शासन या निर्णय लेने की प्रक्रिया में या व्यक्तिगत अधिकार हासिल करने की दिशा में कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं किया गया है। पेसा अधिनियम इन आदिवासी समुदायों की परम्पराओं, प्रथाओं और ज्ञान को ध्यान में रखते हुए विकेंद्रीकृत शासन को मजबूत करने के लिए प्रतिबद्ध है, लेकिन इसके तहत महिलाओं को कोई भी विशिष्ट अधिकार नहीं दिए गए हैं। हालांकि कुछ लोग यह तर्क दे सकते हैं कि यह लैंगिक रूप से निष्पक्ष कानून है और इसलिए महिलाओं की भागीदारी पर कोई बंदिश नहीं है लेकिन अगर ज़मीनी वास्तविकता को देखा जाए तो यह सिर्फ एक झूठा दिलासा है, जहाँ घर से लेकर हर स्तर पर ढांचागत रुकावटों की वजह से महिलाएं अपने अधिकारों और प्रतिनिधित्व के लिए दावा करने के असमर्थ हैं।

वन अधिकार अधिनियम 2006 ने पेसा कानून के प्रावधानों के आगे जाकर आदिवासी और अन्य परंपरागत वनवासियों के लिए, विशेषकर महिलाओं के लिए, अधिकार हासिल करने और अपने साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय को दूर करने के नई संभावनाओं को जन्म दिया। इस अधिनियम के तहत आदिवासी और गैर आदिवासी (जिन्हें अधिनियम में अन्य परम्परागत वननिवासी कहा गया है) वनवासियों, दोनों के अधिकारों को मान्यता दी है, उनकी पारम्परिक प्रथाओं और जंगल, पहाड़ी क्षेत्र, झाड़ी जंगल या घास के मैदानों जैसे विभिन्न पारिस्थितिकी इलाकों के साथ उनके संबंधों पर आधारित हैं, जहाँ वे निवास करते हैं एवं प्राकृतिक पर्यावरण के साथ सह-अस्तित्व में रहते है। वनाधिकार अधिनियम ने विशेष रूप से महिलाओं और घुमंतू तथा अन्य परंपरागत वन-निवासी समुदायों को जंगलों के वन संसाधनों पर अपने अधिकार के रूप में दावा करने का अवसर दिया है और विशेषतः असुरक्षित जनजातीय समूहों (जीने पहले आदिम जनजाति समूह कहा जाता था) के अपने निवास-स्थलों पर अधिकारों का दावा करने का अवसर दिया गया है। हालांकि इनमें से ज़्यादार अधिकारों को अभी तक मान्यता नहीं दी गई है। पिथौरागढ़ के वनराजी समुदाय की महिलाओं की कहानी बताती है कि कैसे महिलाएँ और उनके समुदाय पी.वी.टी.जी. समूहों के रूप में वन क्षेत्रों पर अपने अधिकारों को हासिल करने और आर्थिक व राजनीतिक रूप से अपनी स्थिति को मजबूत करने की कोशिश कर रहे हैं। राज्य प्रशासन ने उन्हें पी.वी.टी.जी. समूह के रूप में मान्यता तो दी है, लेकिन पी.वी.टी.जी. समुदायों के रूप में अपने निवास-स्थान पर उनके व्यापक अधिकारों की अनदेखी करते हुए, आवासीय (Habitat) भूमि के केवल एक छोटे से टुकड़े पर ही उनके अधिकारों को मान्यता दी गई है। इस तरह की सांकेतिक मान्यता भी गैर-सरकारी संगठनों, महिला संगठनों एवं कार्यकर्ताओं द्वारा कई बार अपील, बातचीत, जागरूकता एवं दबाव बनाने के बाद ही दी गई है। अगर सरकार द्वारा इन समुदायों को “लाभार्थी” के रूप में देखने, और इनके प्रति दरियादिली के रूप में, मुट्ठी भर भूमि आवंटित करने के रवैया को बदलकर, इन्हें विशेषतः असुरक्षित जनजातीय समूहों से आने वाले नागरिकों के रूप में व्यक्तिगत और निवास स्थान अधिकार देने के लिए सरकार को मजबूर करना है तो, इन समुदायों और इनके समर्थन में खड़े संगठनों को पूरे दृढ़ संकल्प के साथ प्रयास करने होंगे।

अतः जब इन हाशिए की इन विभिन्न पहचानों के आपसी अंतर्संबंधों से उत्पन्न सामाजिक स्थिति का सामना परिवार, समुदाय, राजनीति एवं राज्य की व्यवस्थाओं और प्रणालियों से होता है तो उस संदर्भ में इन अधिकारों के लिए संघर्ष करना चुनौतियों का एक जटिल जाल साबित हो रहा है। यह स्थिति सबसे ज्यादा स्पष्ट तब दिखाई देती है जब एकल महिलाएं अपने दावों के लिए संघर्ष करती हैं, जिसके चलते वे दशकों से इन पितृसत्तात्मक दमनकारी व्यवस्थाओं से जूझती रहती करती हैं, जैसा कि गुजरात के साबरकांठा की कहानी में स्पष्ट रूप से वर्णित है। इस सबके बावजूद, जिन महिलाओं ने अधिनियम की ताकत के बारे में सीखा/समझा है, वे अपने अधिकारों के लिए दावा करने और प्रतिनिधित्व

हासिल करने के लिए उत्सुक हैं और लगातार प्रयास कर रही हैं। विभिन्न स्तरों पर प्रतिरोध के बावजूद एकल महिलाओं, विवाहित महिलाओं, विधवाओं, वृद्ध महिलाओं और अन्य श्रेणी की महिलाओं ने अपने दावे दर्ज कराने की मांग की है। जहाँ इस तरह के दावों को खारिज कर दिया गया है या उनकी अनदेखी की गई है, वहाँ महिलाओं ने अपनी आवाज बुलंद करने, अपने दावों पर जोर देने और उन पर कार्रवाई करने के लिए अपने-अपने क्षेत्रों में सामुदायिक संगठनों और गैर सरकारी संगठनों का समर्थन लिया है।

राजस्थान की मानसी देवी की कहानी कई महिलाओं द्वारा वन-निवासियों के रूप में अधिकार के दावेदारों के तौर पर मान्यता पाने और कुछ हद तक अपनी स्वायत्तता को बनाए रखते हुए जंगलों के साथ सामंजस्य बनाकर अपना जीवन जीने के लिए किए जा रहे निरंतर प्रयासों का उदाहरण है। यह एक महत्वपूर्ण पहचान है जो उन्हें संसाधनों तक कुछ पहुँच और समाज में थोड़ी-बहुत हैसियत प्रदान करती है, जिसे कमज़ोर करने की कोशिश को महिलाएँ अपने जीवन और आजीविका के लिए खतरे के रूप में देखती हैं। महिलाओं ने अपने दावों को आगे बढ़ाने की प्रक्रिया के दौरान अपने परिवारों के भीतर हिंसा से लेकर, ढाँचागत उत्पीड़न एवं अपने जीवन को खतरे में डालने जैसी कठिनाइयों का सामना भी किया है; लेकिन वे अडिग हैं क्योंकि जंगल उन्हे सुरक्षा देते हैं और उनके अस्तित्व को एक विशेष पहचान देते हैं, जिसे महिला वन श्रमिकों पर हमारी पिछली श्रृंखला में स्पष्ट रूप से उजागर किया गया है।[5] मानसी देवी के जिले से ही दूसरी कहानी एक महिला नेता, बालकी देवी की है, जिन्होंने पंचायत-स्तरीय प्रतिनिधी के रूप में अपनी समझ और सत्ता का उपयोग करते हुए पेसा एवं वनाधिकार अधिनियम के क्रियान्वयन की मांग की है। यह तथ्य इस बात की गवाही देता है कि महिलाएं वनाधिकार और पेसा अधिनियमों की ताकत को पहचानती हैं, ना केवल पारम्परिक ज्ञान एवं वन संरक्षण के संबंध में उनकी भूमिकाओं को फिर से मान्यता देने के संबंध में, बल्कि वनाधिकार अधिनियम के तहत सामुदायिक अधिकारों और वनों से उनके रिश्ते और प्राकृतिक संसाधनों के व्यवस्थापन के संबंध में भी।

इसमें और अन्य मामलों में सामुदायिक वन अधिकारों (CFR) का दावा करने के इरादे की उनकी अभिव्यक्ति जैसे कि महाकोनी का मामला जहाँ महिलाओं ने ग्राम सभा के अन्य सदस्यों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर लड़ाई लड़ी और वन अधिकार समिति के (FRC) सदस्यों और दावेदारों के रूप में, लकड़ी माफिआ से अपने वनों की रक्षा के लिए अपने अधिकारों का दावा किया। ये आदिवासी समुदाय अपनी निम्नतम जरूरतों के साथ पारंपरिक तरीकों से जीवन यापन कर रहे हैं। कई दस्तावेज और रिपोर्ट बताते हैं कि कैसे पूर्व-औपनिवेशिक काल में राजाओं और आक्रमण

[5] 2019 में GAATW के सहयोग से यूट्यूब पर पूरी श्रंखला “हमारे संघर्ष हमारे हक़” (Struggle for our rights) नामक मकाम की ऑडियो विशुअल प्रस्तुति उपलब्ध

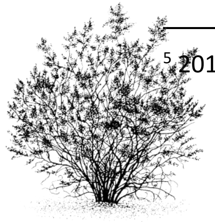

कारियों द्वारा वनवासी समुदायों को उनकी पारंपरिक भूमि से विस्थापित किया गया और औपनिवेशिक शासकों द्वारा वन संसाधनों की खनिज संपदा या, ढांचागत सुविधाएं, ऊर्जा या औद्योगिक परियोजनाओं आदि के लिए भूमि की - लूट की गई।

जंगलों से जुड़ा विमर्श लंबे समय से संसाधनों के दोहन पर केंद्रित औपनिवेशिक दृष्टिकोण पर आधारित रहा है, एक ऐसा मानव-केंद्रित दृष्टिकोण जिसमें जंगलों को कब्ज़ा किए जाने वाले, लुटे जाने वाले या दोहन के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले संसाधनों के रूप में देखा जाता है। इस तरह की गढ़ी हुई पतृसत्तात्मक सोच को पर्यावरण संबंधित आंदोलनों की अगुवाई करने वाली महिलाओं ने और ज़मीनी स्तर पर प्रक्रृति के साथ सामजस्य के साथ अपनी दिनचर्या और जीवनशैली को बनाए रखने की मुहीम में लगी महिअलों ने लल्कारा है महाराष्ट्र के रायगढ़ जिले के पेण तहसील के विशेषतः असुरक्षित जनजातीय समूहों से आने वाली महिलाओं ने राजमार्ग को चौड़ा करने की परियोजना का विरोध किया है। इससे पहले उन्होंने अपने क्षेत्र में परमाणु ऊर्जा परियोजना और अभयारण्यों का भी विरोध किया था, जो उनके अनुसार उनके जीवन और आजीविका के अधिकारों का उल्लंघन करते हैं। सरकार और कॉरपोरेट कंपनियां यहाँ उद्योग और बुनियादी ढांचे से जुड़ी परियजनाएँ लगाना चाहते हैं, जबकि विशेषतः असुरक्षित जनजातीय समूह के रूप में मान्यता प्राप्त कटकरी समुदाय की महिलाएं इसका विरोध करते हुए, मुआवज़े की मांग करने के साथ-साथ सब्ज़ियों की खेती से मिलने वाली आमदनी और जंगलों से मिलने वाली खाद्य सामग्री के रूप में अपने प्रकृति-आधारित जीवन और जीवनशैली को बचाना चाहती हैं। इसी तरह, महाकोनी की महिलाओं ने भी अपनी ज़मींनो और अपने जंगलों को बचाने का बीड़ा उठाया है, ताकि इन जंगलों को उस वन विभाग के प्रकोप से बचाया जा सके जिनको इन वनों को बचाने की ज़िम्मेदारी दी गई है।

ढांचागत उत्पीड़न के खिलाफ और अपने अधिकारों के लिए महिलाओं की दावेदारियों को इन सभी कहानियों में कई स्तरों पर देखा जा सकता है। जहाँ एक तरफ बाल्की देवी व्यक्तिगत और समाज के स्तर पर पितृसत्ताओं को चुनौती देते हुए सरपंच के रूप में आदिवासी समुदाय की अन्य महिलाओं के लिए अपने अधिकार हासिल करने का मार्ग प्रशस्त करती हैं; वहीं महाकोनी और पेण की महिलाएं अपने ही संसाधनों पर नियंत्रण से वंचित किए जाने के पीछे की ढांचागत हिंसा का प्रतिरोध करते हुए, विकास के नाम पर उनके हितों की अनदेखी करने वाली सरकार को चुनौती देते हुए मांग करती हैं कि उन्हें भी नागरिक के रूप में देखा जाए और उनके अधिकारों को भी उतना ही महत्व दिया जाए जितना पूंजीपतियों की तिजोरी भरने वाले विकास के एजेंडा को दिया जाता है।

महाकोनी में जो हुआ, वो और भी ज़्यादा जटिल है क्योंकि वहाँ सामुदायिक अधिकारों को मान्यता देने के बाद सरकार ने ही इन अधिकारों को छीन लिया। इसी तरह के एक दूसरे मामले में, महासमंद जिले के पिलवापाली गाँव में सामुदायिक वन अधिकारों के लिए मंजूर की गई भूमि को एक कॉरपोरेट घराने को आवंटित कर दिया गया। वहाँ की महिलाओं ने उन्हें आवंटित की गई भूमि पर इस प्रकार किए जा रहे कब्ज़े का पुरज़ोर विरोध किया। इस मामले को उच्च न्यायालय के सामने उठाया गया और न्यायालय ने समुदायों के अधिकारों को फिर से कायम करते हुए, भूमि के आवंटन पर रोक लगाई। एनईटीआरआई प्रक्रिया का नेतृत्व करने वाली महिलाओं के अथक प्रयासों की वजह से इस मामले का फैसला समुदायों के हक़ में रहा।

गुजरात में एकल महिलाओं ने तमाम दिक्कतों के बावजूद अपने अधिकारों के लिए एक दशक से भी ज़्यादा लंबी लड़ाई लड़ी, लेकिन विशेषतः असुरक्षित जनजातीय समूह (पीवीटीजी) और अन्य पारंपरिक वनवासी (ओटीएफडी) समुदायों की महिलाओं के लिए अधिकार हासिल करने की राह और भी ज़्यादा कठिन है क्योंकि उन्हें अक्सर वनाधिकार अधिनियम के विमर्श के बाहर रखा जाता है, और अधिनियम के तहत उनके अधिकारों की मान्यता पर बार-बार प्रश्नचिन्ह खड़े किए जाते हैं। इनमें से सबसे हाशिए के, पीवीटीजी समुदायों को दया और लाचार होने के ज़रिए से देखा गया है जबकि जंगलों से उनके नज़दीकी रिश्ते को मान्यता देते हुए इस कानून में उन्हें अपने निवास-स्थानों पर अधिकार दिए गए हैं। इसके बावजूद राज्य और प्रशासन अपनी दरियादिली का ढोंग करते हुए, मुआवज़े की रकम देने के बदले में, सबसे हाशिए के इन समुदायों पर संसाधनों पर उनके अधिकारों को छोड़ने का लगातार दबाव डाल रहा है। यह न सिर्फ इस कानून के प्रावधानों का बल्कि इन समुदायों के संवैधानिक अधिकारों का भी सीधी तौर पर उल्लंघन है।

उत्तराखंड की सानिया बस्ती में अन्य पारंपरिक वनवासी समुदायों (ओटीएफडी) को वन विभाग द्वारा लगातार किए जा रहे उत्पीड़न से बचने के लिए अदालत का दरवाज़ा खटखटाना पड़ा, और अंत में उन्हें उच्च न्यायलय में जीत भी हासिल हुई है। उत्पीड़न के खिलाफ संघर्ष का उन्होंने एक बेहतरीन उदहारण पेश किया है जिससे हम सभी को प्रेरणा मिलती है, लेकिन ज़मीन पर उनके अधिकारों का मुद्दा अब भी लटका हुआ है, और भूमि आवंटन के उनके दावों को सरकार दफ्तरों की फाइलों में दबा देने की लगातार कोशिश कर रही है। इसी तरह, छत्तीसगढ़ के महाकोनी में महिलाओं ने अपने इलाके में पेड़ काटने के लिए घुसने वाले अधिकारीयों के औजार जब्त कर लिए और तब ही वापस किए जब उन अधिकारीयों ने लिखित में माफ़ी मांगी। लेकिन यहाँ भी सरकार जन अधिकारों को मान्यता देने के अपने ही प्रयासों को नाकाम करने में लगी है। पितृसत्ताओं और वर्ग-जाति आधारित दमन का सामना करते हुए अपने अधिकारों के लिए यह संघर्ष, महिलाओं और उनके समुदायों के साहस का महत्वपूर्ण

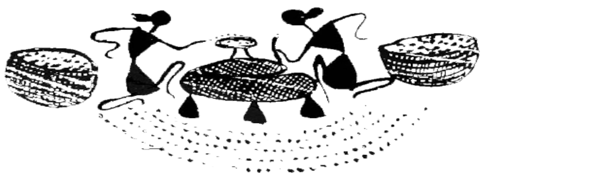

उदाहरण है। लेकिन जिस राज्य को जंगलों के संरक्षण की ज़िम्मेदारी दी गई है, उसके ही द्वारा पर्यावरण का विनाश किए जाना, कॉर्पोरेट हितों से उसकी नज़दीकी का पर्दाफाश करता है। लगातार रिपोर्ट की जा रही हिंसा की और अधिकारों से वंचित किए जाने की खबरों के चलते, जन अधिकार सुनिश्चित कर पाने और इस हिंसा को रोक पाने में राज्य की नाकामी और इन पर साधी गई चुप्पी पर सवाल उठाने की ज़रुरत है। यहाँ शामिल की गई केस स्टडी (उदाहरणों के अध्ययन) ज़मीनी-स्थिति की संक्षिप्त तस्वीर पेश करती हैं, जो हमें उन इलाकों की स्थिति के बारे में सोचने पर मजबूर कर देती हैं, जहाँ समुदायों के बीच अधिकारों के बारे में जागरूकता बढ़ाने वाले और दावे दायर करने में समर्थन देने वाले सामाजिक संगठन मौजूद नहीं हैं।

कुछ छोटे और कुछ बड़े कदमों के ज़रिए महिलाएं बदलाव की ओर बढ़ रही हैं, चाहे अधिकारों के लिए उनके दावे हों, या अपने नेतृत्व की दवेदारियाँ हों, या अपने प्राकृतिक वातावरण को फिर से कायम करने की उनकी अनूठी पहल। जंगल से जुड़ी हुई महिलाओं ने जंगलों में लगाई जा रही प्रजातियों के चुनाव में अपनी राय को शामिल किए जाने तथा संसाधनों के संरक्षण और संवर्धन से जुड़े फैसलों और भविष्य की दिशा तय करने की प्रक्रिया में समान भागीदारी की मांग की है। इनमें में से कई महिलाओं ने अपने अधिकारों के लिए खुद को संगठित करना भी शुरू कर दिया है, जैसे गढ़चिरोली के कोरची खंड में, ताकि महा-ग्रामसभाओं में उनके नेतृत्व को और उनके मुद्दों को उचित स्थान दिया जाए। महिलाओं के इन समूहों ने वन धन योजना जैसी सरकारी योजनाओं के तहत अपने अधिकारों का दावा करना भी शुरू कर दिया है, हालांकि इन प्रयासों का आलोचनात्मक विश्लेषण किया जाना अभी बाकी है।

दूसरी जगहों पर, महिलाओं ने संगठित होकर कैम्पा (प्रतिकरात्मक वनरोपण निधि) अधिनियम, 2016 के तहत ज़मीनों के पोडू के बजाय अन्य उदेश्यों के लिए इस्तेमाल किए जाने के खिलाफ अभियान शुरू किया है, और इसके ज़रिए उद्योग और खनन के लिए वन भूमि के इस्तेमाल का विरोध किया है। उनके संघर्षों का जवाब, बढ़ते टकराव और यहाँ तक की हिंसा से भी दिया गया है, जिसका विरोध करते हुए मकाम ने कई वक्तव्य जारी किए हैं। युवा महिलाओं और लड़कियों के मुद्दों, विशेष रूप से दमनकारी और पितृसत्तात्मक वन प्रशासन के रवैया के कारण पैदा होने वाले रोज़मर्रा के खतरों को भी मकाम बहुत प्रखर आवाज़ में उठाता रहा है। वन संरक्षण अधिनियम तथा खान और खनिज अधिनियम में हाल में प्रस्तावित बदलावों ने हमें लिंग-दृष्टिकोण से अपनी चिंताओं को व्यक्त करने के लिए मजबूर किया है। पर्यावरण के संवर्धन को बढ़ावा देने वाले वन शासन को मजबूत बनाने से जुड़ी महिलाओं की क्षमताओं और उनके अधिकारों को केंद्र में रखते हुए, हमने धरातल से आने वाली आवाज़ों और महिलाओं के मुद्दों को निति-निर्माण की प्रक्रिया में उचित स्थान दिए जाने की दिशा में प्रयास किए हैं। इन प्रयासों की सफलता

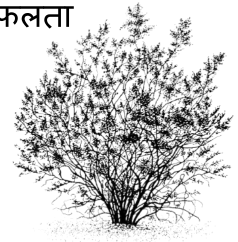

को स्थानीय संस्थाओं और गठबंधनों में महिलाओं के बढ़ते प्रतिनिधित्व में, उनके नज़रियों से मुद्दों को उठाए जाने और उन्हें संबोधित किए जाने में और जंगलों को बर्बाद करने वालों के चेहरों के लगातार हो रहे खुलासों में देखा जा सकता है। लेकिन पितृसत्ता के रूप में उनके खिलाफ खड़ी ताकतें, वन-रक्षकों और वन-संरक्षकों के रूप में उनकी भूमिका पर पर्दा डालने का काम करती हैं। वन-प्रबंधन की पुरानी हो चुकी प्रशासनिक प्रणाली के साथ-साथ सामरिक पर्यावरणवाद के कारण स्थिति बद से बदतर होती जा रही है। सरकार और कंपनियों की जवाबदेही के अभाव में, समुदायों के अधिकार-क्षेत्र में आने वाले जंगलों के इर्द-गिर्द दीवार खड़ी किया जाना, कंटीली तारों का लगाया जाना, वनाधिकार कानून के तहत अधिकार-पूर्ण मानी गई वन भूमि पर पेड़ों का गिराया जाना और समुदायों के घरों के आस-पास तालाब और जल-निकायों का खोदा जाना, यह सभी इन समुदायों के अनिश्चित भविष्य का संकेत देते हैं।

महिलाओं के अनुभवों और उनकी आवाज़ों की आज सबसे ज़्यादा ज़रुरत है। वन पर्यावरण के संरक्षण के लिए भी और वन-निवासियों के वजूद और उनकी जीवन-शैलियों को बचाने के लिए भी। और यह तभी संभव हो सकता है जब महिलाओं को जानकारी हासिल करने, एक-दूसरे के संघर्षों को समर्थन देने के ज़रिए आपसी एकजुटता कायम करने और सामूहिक रूप से अपने अधिकारों की दवेदारियाँ पेश करने के मौके दिए जाऐ। वनाधिकार अधिनियम और पेसा कानून पर सर्वोच्च न्यायालय और अन्य स्तरों पर हो रहे हमलों से जूझने के लिए, प्रजातांत्रिक तरीकों से हमें कई स्तरों पर जवाबदेही प्रणालियों को मजबूत बनाना होगा। पर्यावरण और जनजातीय कार्य मंत्रालय द्वारा जारी किए गए संयुक्त वक्तव्य जैसे परस्पर अंतर्विरोधी वक्तव्यों और दिशानिर्देशों के ज़रिए कानून को कमज़ोर बनाने के लिए किए जा रहे प्रयासों का मुकाबला करने की भी ज़रुरत है। हालांकि महाराष्ट्र सरकार ने मनरेगा के कार्यान्वयन में ग्राम-सभाओं की भूमिका को मान्यता देकर सराहनीय कदम उठाए हैं, लेकिन उनके द्वारा उठाए गए अन्य कदम समुदायों की भूमिका और पर्यावरण के ज़मीनी-स्तरीय प्रबंधन में समुदाय के नेतृत्व की संभावनाओं को सीमित करते हैं।

विस्थापन और अधिकारों से वंचित किए जाने के चलते, अपने समुदायों को समृद्धि से कंगाली की स्थिति की ओर लगातार गिरते हुए देखने वाली आदिवासी और अन्य पारंपरिक वन-निवासी समुदायों की महिलाओं को रोज़ अपने समुदाय के गुज़ारे के लिए संघर्ष करना पड़ता है। अगर सरकार और सामाजिक संगठन वाकई में पर्यावरण और जंगलों के सुशासन को लेकर गंभीर हैं, तो उन्हें इन समुदायों की आवाज़ों को उनका उचित स्थान और मान देना होगा, और इन समुदायों द्वारा किए जा रहे जंगलों को बचाने के प्रयासों को अपना समर्थन और विश्वास देना होगा।

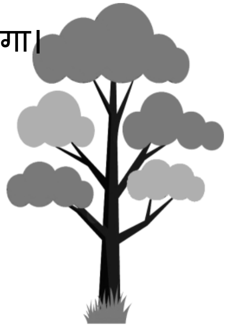

इस तरह की भागीदारी ही पर्यावरण के नज़रिए से एक ऐसे समृद्ध और खुशाल देश की नींव रख सकती है, जिसमें वन-निवासी समुदाय अपनी पहचान के साथ गरिमा-पूर्ण जीवन जी सकें।

महिला किसान अधिकार मंच

MAHILA KISAN ADHIKAAR MANCH

मकाम और वन अधिकार समूह के बारे में

मकाम 25 राज्यों की महिला किसानों का एक साझा मंच है, जो महिला किसानों के मुद्दों एवं प्राथमिकताओं के लिए नीति परिवर्तन एवं पारिस्थितिकी/पर्यावरण विकास के लिए प्रयासरत है।

वन अधिकार समूह वन आश्रित एवं आदिवासी महिलाओं की विशेष रूप से जरूरतों एवं चिंताओं पर कार्य करने की मंसा से उभरा है। इसका मुख्य उद्देश्य पर्यावरण एवं वन संरक्षण में महिलाओं के साझे प्रयास, नेतृत्व, और उनकी क्षमताओं की पहचान एवं पैरवी से वन संरक्षण एवं अधिकारों को मजबूत करना है। आप हमारे कार्य के बारे में हमारी वेबसाइट makaam.in पर और अधिक जानकारी प्राप्त कर सकते हैं

contact: gargiemunglekar@gmail.com #9604 779666

The **Forest Rights Collective** has emerged within **MAKAAM** to address the specific needs and undertake efforts to influence and drive policy to recognize women forest dwellers' rights. We seek to acknowledge and foreground women forest dwellers rights and recognize them as ecological warriors integral to ecological protection and conservation of forest regions and ways of living and being.

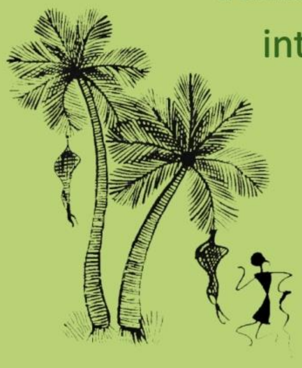

For further information:

somakp@gmail.com; 9811405539

Shubhadadeshmukh1505@gmail.com; 9168655693

richaadhikar@gmail.com 9829234886